दादा भगवान प्ररुपित

पाप-पुण्य

मनुष्य गति

देव गति



नर्क गति

तिर्यंच गति

दादा भगवान कथित

पाप-पुण्य

मूल संकलन : डॉ. नीरू बहन अमीन

अनुवाद : महात्मागण

प्रकाशक : **अजीत सी. पटेल**
दादा भगवान विज्ञान फाउन्डेशन,
1, वरूण अपार्टमेन्ट, 37, श्रीमाली सोसायटी,
नवरंगपुरा पुलिस स्टेशन के सामने, नवरंगपुरा,
अहमदाबाद - 380009, Gujarat, India.
फोन : +91 79 3500 2100, +91 9328661166/77

प्रथम संस्करण : 3000, प्रतियाँ अगस्त, 2010
रीप्रिन्ट : 8000 प्रतियाँ दिसम्बर, 2011 से सितम्बर, 2016
नई रीप्रिन्ट : 3000 प्रतियाँ जूलाई, 2024

भाव मूल्य : 'परम विनय' और 'मैं कुछ भी जानता नहीं', यह भाव!

द्रव्य मूल्य : 35 रुपए

मुद्रक : अंबा मल्टीप्रिन्ट
एच.बी.कापडिया न्यू हाइस्कूल के सामने,
छत्राल-प्रतापपुरा रोड, छत्राल,
ता. कलोल, जि. गांधीनगर-382729, गुजरात
फोन : +91 79 3500 2142

ISBN/eISBN : 978-93-86289-63-6

Printed in India

त्रिमंत्र







नमो अरिहंताणं

नमो सिद्धाणं

नमो आयरियाणं

नमो ऊवज्झायाणं

नमो लोए सव्वसाहूणं

एसो पंच नमुक्कारो

सव्व पावप्पणासणो

मंगलाणं च सव्वेसिं

पढमं हवइ मंगलं ॥ १ ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥

ॐ नम: शिवाय ॥ ३ ॥

जय सच्चिदानंद



'दादा भगवान' कौन?

जून 1958 की एक संध्या का करीब छः बजे का समय, भीड़ से भरा सूरत शहर का रेल्वे स्टेशन पर बैठे श्री ए.एम.पटेल रूपी देहमंदिर 'दादा भगवान' पूर्ण रूप से प्रकट हुए और कुदरत ने सर्जित किया अध्यात्म का अद्‌भुत आश्चर्य। एक घंटे में उन्हें विश्वदर्शन हुआ। 'मैं कौन? भगवान कौन? जगत् कौन चलाता है? कर्म क्या? मुक्ति क्या?' इत्यादि जगत् के सारे आध्यात्मिक प्रश्नों के संपूर्ण रहस्य प्रकट हुए।

उन्हें प्राप्ति हुई, उसी प्रकार केवल दो ही घंटों में अन्य को भी प्राप्ति करवाते थे, उनके अद्‌भुत सिद्ध हुए ज्ञानप्रयोग से। उसे 'अक्रम मार्ग' कहा। क्रम अर्थात् सीढ़ी दर सीढ़ी, क्रमानुसार ऊपर चढ़ना! अक्रम अर्थात् बिना क्रम के, लिफ्ट मार्ग, शॉर्ट कट!

वे स्वयं प्रत्येक को 'दादा भगवान कौन?' का रहस्य बताते हुए कहते थे कि ''यह जो आपको दिखते हैं वे दादा भगवान नहीं हैं, हम ज्ञानी पुरुष हैं और भीतर प्रकट हुए हैं, वे 'दादा भगवान' हैं। जो चौदह लोक के नाथ हैं। वे आप में भी हैं, सभी में हैं। आपमें अव्यक्त रूप में रहे हुए हैं और 'यहाँ' हमारे भीतर संपूर्ण रूप से व्यक्त हुए हैं। मैं खुद भगवान नहीं हूँ। मेरे भीतर प्रकट हुए दादा भगवान को मैं भी नमस्कार करता हूँ।''

आत्मज्ञान प्राप्ति की प्रत्यक्ष लिंक

परम पूज्य दादा भगवान (दादाश्री) को 1958 में आत्मज्ञान प्रकट हुआ था। उसके बाद 1962 से 1988 तक देश-विदेश परिभ्रमण करके मुमुक्षुजनों को सत्संग और आत्मज्ञान की प्राप्ति करवाते थे।

दादाश्री ने अपने जीवनकाल में ही पूज्य डॉ. नीरू बहन अमीन (नीरू माँ) को आत्मज्ञान प्राप्त करवाने की ज्ञानसिद्धि प्रदान की थी। दादाश्री के देहविलय पश्चात् नीरू माँ उसी प्रकार मुमुक्षुजनों को सत्संग और आत्मज्ञान की प्राप्ति, निमित्त भाव से करवा रही थी।

आत्मज्ञानी पूज्य दीपक भाई देसाई को दादाश्री ने सत्संग करने की सिद्धि प्रदान की थी। वर्तमान में पूज्य नीरू माँ के आशीर्वाद से पूज्य दीपक भाई देश-विदेश में निमित्त भाव से आत्मज्ञान करवा रहे हैं।

इस आत्मज्ञान प्राप्ति के बाद हज़ारों मुमुक्षु संसार में रहते हुए, सभी ज़िम्मेदारियाँ निभाते हुए भी मुक्त रहकर आत्मरमणता का अनुभव करते हैं।

निवेदन

ज्ञानी पुरुष संपूज्य दादा भगवान के श्रीमुख से अध्यात्म तथा व्यवहारज्ञान से संबंधित जो वाणी निकली, उसको रिकॉर्ड करके, संकलन तथा संपादन करके पुस्तकों के रूप में प्रकाशित किया जाता है। विभिन्न विषयों पर निकली सरस्वती का अद्‌भुत संकलन इस पुस्तक में हुआ है, जो नए पाठकों के लिए वरदान रूप साबित होगा।

प्रस्तुत अनुवाद में यह विशेष ध्यान रखा गया है कि वाचक को दादाजी की ही वाणी सुनी जा रही है, ऐसा अनुभव हो, जिसके कारण शायद कुछ जगहों पर अनुवाद की वाक्य रचना हिन्दी व्याकरण के अनुसार त्रुटिपूर्ण लग सकती है, लेकिन यहाँ पर आशय को समझकर पढ़ा जाए तो अधिक लाभकारी होगा।

प्रस्तुत पुस्तक में कई जगहों पर कोष्ठक में दर्शाए गए शब्द या वाक्य परम पूज्य दादाश्री द्वारा बोले गए वाक्यों को अधिक स्पष्टतापूर्वक समझाने के लिए लिखे गए हैं। जबकि कुछ जगहों पर अंग्रेजी शब्दों के हिन्दी अर्थ के रूप में रखे गए हैं। दादाश्री के श्रीमुख से निकले कुछ गुजराती शब्द ज्यों के त्यों *इटालिक्स* में रखे गए हैं, क्योंकि उन शब्दों के लिए हिन्दी में ऐसा कोई शब्द नहीं है, जो उसका पूर्ण अर्थ दे सके। हालांकि उन शब्दों के समानार्थी शब्द अर्थ के रूप में, कोष्ठक में और पुस्तक के अंत में भी दिए गए हैं।

ज्ञानी की वाणी को हिन्दी भाषा में यथार्थ रूप से अनुवादित करने का प्रयत्न किया गया है किन्तु दादाश्री के आत्मज्ञान का सही आशय, ज्यों का त्यों तो, आपको गुजराती भाषा में ही अवगत होगा। जिन्हें ज्ञान की गहराई में जाना हो, ज्ञान का सही मर्म समझना हो, वह इस हेतु गुजराती भाषा सीखें, ऐसा हमारा अनुरोध है।

अनुवाद से संबंधित कमियों के लिए आपसे क्षमाप्रार्थी हैं।

❖❖❖❖❖

दादा भगवान फाउन्डेशन के द्वारा प्रकाशित हिन्दी पुस्तकें

1. आत्मसाक्षात्कार
2. ज्ञानी पुरुष की पहचान
3. सर्व दु:खों से मुक्ति
4. कर्म का सिद्धांत
5. आत्मबोध
6. मैं कौन हूँ ?
7. पाप-पुण्य
8. भुगते उसी की भूल
9. एडजस्ट एवरीव्हेयर
10. टकराव टालिए
11. हुआ सो न्याय
12. चिंता
13. क्रोध
14. प्रतिक्रमण (सं, ग्रं)
16. दादा भगवान कौन ?
17. पैसों का व्यवहार (सं, ग्रं)
19. अंत:करण का स्वरूप
20. जगत कर्ता कौन ?
21. त्रिमंत्र
22. भावना से सुधरे जन्मोंजन्म
23. चमत्कार
24. प्रेम
25. समझ से प्राप्त ब्रह्मचर्य (सं, पू, उ)
28. दान
29. मानव धर्म
30. सेवा-परोपकार
31. मृत्यु समय, पहले और पश्चात्
32. निजदोष दर्शन से... निर्दोष
33. पति-पत्नी का दिव्य व्यवहार (सं)
34. क्लेश रहित जीवन
35. गुरु-शिष्य
36. अहिंसा
37. सत्य-असत्य के रहस्य
38. वर्तमान तीर्थंकर श्री सीमंधर स्वामी
39. माता-पिता और बच्चों का व्यवहार(सं)
40. वाणी, व्यवहार में... (सं)
41. कर्म का विज्ञान
42. सहजता
43. आप्तवाणी - 1
44. आप्तवाणी - 2
45. आप्तवाणी - 3
46. आप्तवाणी - 4
47. आप्तवाणी - 5
48. आप्तवाणी - 6
49. आप्तवाणी - 7
50. आप्तवाणी - 8
51. आप्तवाणी - 9
52. आप्तवाणी - 12 (पू)
53. आप्तवाणी - 13 (पू, उ)
55. आप्तवाणी - 14 (भाग-1 से 3)
58. ज्ञानी पुरुष (भाग-1)

(सं - संक्षिप्त, ग्रं - ग्रंथ, पू - पूर्वार्ध, उ - उत्तरार्ध)

★ दादा भगवान फाउन्डेशन के द्वारा गुजराती भाषा में भी कई पुस्तकें प्रकाशित हुई है। वेबसाइट www.dadabhagwan.org पर से भी आप ये सभी पुस्तकें प्राप्त कर सकते हैं।

★ दादा भगवान फाउन्डेशन के द्वारा हर महीने हिन्दी, गुजराती तथा अंग्रेजी भाषा में ''दादावाणी'' मैगेज़ीन प्रकाशित होता है।

संपादकीय

हमारे भारत में तो पुण्य-पाप की समझ बच्चा डगमग डग भरने लगे तभी से ही दी जाती है। छोटा बच्चा जीवजंतु मार रहा हो, तो माता फटाक से उसके हाथ पर मार देती है और क्रोध करके कहती है, 'नहीं मारते, पाप लगता है!' बचपन से ही बालक को सुनने को मिलता है, 'गलत करेगा तो पाप लगेगा, ऐसा नहीं करते।' कई बार मनुष्य को दुःख पड़ता है, तब रो उठता है, कहेगा मेरे कौन-से भव के पापों की सजा भुगत रहा हूँ। अच्छा हो जाए तो कहेंगे 'पुण्यशाली है'। इस प्रकार से पाप-पुण्य शब्द का अपने व्यवहार में अक्सर प्रयोग होता रहता है।

भारत में तो क्या, विश्व के तमाम लोग पुण्य-पाप को स्वीकार करते हैं और उनमें से किस प्रकार छूटा जाए, उसके उपाय भी बताए गए हैं।

पर पुण्य-पाप की यथार्थ परिभाषा क्या है? यथार्थ समझ क्या है? पूर्वभव-इस भव और अगले भव के साथ पाप-पुण्य का क्या संबंध है? जीवन व्यवहार में पाप-पुण्य के फल किस प्रकार भुगतने पड़ते हैं? पुण्य और पाप के प्रकार कैसे होते हैं? वहाँ से लेकर ठेठ मोक्ष मार्ग में पाप-पुण्य की क्या उपयोगिता है? मोक्ष प्राप्ति के लिए पाप-पुण्य दोनों ज़रूरी हैं, या दोनों से मुक्त होना पड़ेगा?

पुण्य-पाप की इतनी सारी बातें सुनने को मिलती हैं, कि इनमें सच क्या है? वह समाधान कहाँ से मिलेगा? पाप-पुण्य की यथार्थ समझ के अभाव में कई उलझनें खड़ी हो जाती हैं। पुण्य और पाप की परिभाषा कहीं भी क्लियरकट और शॉर्टकट (स्पष्ट और संक्षेप में) में देखने को नहीं मिलती। इसलिए पुण्य-पाप के लिए तरह-तरह की परिभाषाएँ सामान्य मनुष्य को उलझाती हैं, और अंत में पुण्य बाँधना और पाप करने से रुकना तो होता ही नहीं।

परम पूज्य दादाश्री ने वह परिभाषा बहुत ही सरल, सीधी और सुंदर ढंग से दे दी है कि 'दूसरों को सुख देने से पुण्य बंधता है और दूसरों को दुःख देने से पाप बंधता है' अब इतनी ही जागृति सारे दिन रखें तो उसमें सारा ही धर्म आ गया और अधर्म छूट गया!

और भूलकर भी किसी को दुःख दे दिया जाए तो उसका तुरंत ही

प्रतिक्रमण कर लो। प्रतिक्रमण मतलब जिसे वाणी से, वर्तन से या मन से भी दुःख पहुँचा हो, तो तुरन्त ही उसके भीतर बिराजमान आत्मा, शुद्धात्मा से माफी माँग लें, हृदयपूर्वक पछतावा होना चाहिए और फिर से ऐसा नहीं करूँगा, ऐसा दृढ़ निश्चय हो जाना चाहिए। इतना ही, बस। और वह भी मन में, पर दिल से कर लो, तो भी उसका एक्ज़ेक्ट (यथार्थ) फल मिलता है।

परम पूज्य दादाश्री कहते हैं, 'जीवन पुण्य और पाप के उदय के अनुसार चलता है, दूसरा कोई चलाने वाला नहीं है। फिर कहाँ किसी को दोष या शाबाशी देना रहा? इसलिए पाप का उदय हो, तब अधिक प्रयत्न किए बिना शांत बैठा रह और आत्मा का कर। पुण्य यदि फल देने के लिए सम्मुख हुआ हो तब फिर सैंकड़ों प्रयत्न किसलिए? और पुण्य जब फल देने के लिए सम्मुख नहीं हुआ हो तब फिर सैंकड़ों प्रयत्न किसलिए? इसलिए तू धर्म कर।

पुण्य-पाप संबंधी सामान्य प्रश्नों से लेकर सूक्ष्मातिसूक्ष्म प्रश्नों के भी उतने ही सरल, संक्षिप्त और पुर-असर समाधानकारी उत्तर यहाँ मिलते हैं, परम पूज्य दादाश्री की अपनी देशी शैली में! मोक्ष प्राप्ति के लिए क्या पुण्य की ज़रूरत है? यदि ज़रूरत हो तो कौन-सा और कैसा पुण्य चाहिए?

पुण्य तो चाहिए ही परंतु पुण्यानुबंधी पुण्य चाहिए। इतना ही नहीं परंतु मोक्ष के आशय के साथ ही पुण्य बंधा होना चाहिए, जिससे कि उस पुण्य के फल स्वरूप मोक्ष प्राप्ति के सभी साधन और अंतिम साधन आत्मज्ञानी का मिले! उपरांत पुण्यानुबंधी पुण्य मोक्ष के हेतु के लिए बंधा हुआ हो तो उसके साथ :- 1) क्रोध-मान-माया-लोभ कम हुए होने चाहिए, कषाय मंद हो जाने चाहिए, 2) खुद के पास हो वह दूसरों के लिए लुटा दे और 3) प्रत्येक क्रिया में बदले की इच्छा नहीं रखे तो ही वह पुण्य मोक्ष के लिए काम आएगा, नहीं तो दूसरे पुण्य तो भौतिक सुख देकर बर्फ की तरह पिघल जाएँगे!

ऐसी पाप-पुण्य की यथार्थ समझ तो प्रकट ज्ञानी पुरुष के पास से ही सत्संग प्रश्नोत्तरी द्वारा प्राप्त हुई है, जिसकी प्रस्तुति इस संकलन में हुई है।

- डॉ. नीरु बहन अमीन के जय सच्चिदानंद

पाप-पुण्य

पाप-पुण्य की न मिले कहीं भी ऐसी परिभाषा

प्रश्नकर्ता : पाप और पुण्य, वे भला क्या हैं?

दादाश्री : पाप और पुण्य का अर्थ क्या है? क्या करें तो पुण्य होगा? पुण्य-पाप का उत्पादन कहाँ से होता है? तब कहें, 'यह जगत् जैसा है वैसा जाना नहीं है लोगों ने, इसलिए खुद को जैसा ठीक लगे वैसा बरतते हैं। अर्थात् किसी जीव को मारते हैं, किसी को दुःख देते हैं, किसी को त्रास पहुँचाते हैं।'

किसी भी जीवमात्र को कोई भी त्रास पहुँचाना या दुःख देना, उससे पाप बंधता है। क्योंकि गॉड इज़ इन एवरी क्रीचर वेदर विज़िबल और इन्विज़िबल। (आँख से दिखें वैसे या नहीं दिखें वैसे, प्रत्येक जीवमात्र में भगवान हैं।) इस जगत् के लोग, हर एक जीव, वे भगवान स्वरूप ही हैं। ये पेड़ हैं, उनमें भी जीव है। अब लोग ऐसा भी कहते ज़रूर हैं लेकिन वास्तव में वैसा उनकी श्रद्धा में नहीं है। इसलिए पेड़ को काटते हैं। उन्हें यों ही ऐसे तोड़ते रहते हैं, यानी कि बहुत नुकसान करते हैं। जीवमात्र को किसी भी प्रकार का नुकसान पहुँचाने से पाप बंधते हैं और किसी भी जीव को किसी भी प्रकार से सुख देने पर पुण्य बंधते हैं। आप बग़ीचे में पानी छिड़कते हो तो जीवों को सुख होता है या दुःख? वह जो सुख देते हो उससे पुण्य बंधता है। बस, इतना ही समझना है।

पूरे जगत् के जो धर्म हैं, उन्हें सार रूप में यदि कहना हो तो एक ही बात समझा दें सभी को, कि यदि आपको सुख चाहिए तो

दूसरे जीवों को सुख दो और दुःख चाहिए तो दुःख दो। जो अनुकूल हो वह करो, यह पुण्य और पाप कहलाता है। सुख चाहिए तो सुख दो, उससे क्रेडिट जमा होगा और दुःख चाहिए तो दुःख दो, उससे डेबिट जमा होगा। उनका फल आपको चखना पड़ेगा।

अच्छा-बुरा, पाप-पुण्य के आधार पर

कभी-कभी संयोग अच्छे आते हैं क्या?

प्रश्नकर्ता : अच्छे भी आते हैं।

दादाश्री : उन बुरे और अच्छे संयोगों को कौन भेजता होगा? अपने ही पुण्य और पाप के आधार पर संयोग आ मिलते हैं। ऐसा है, इस दुनिया को कोई चलाने वाला नहीं है। यदि कोई चलाने वाला होता तो पाप-पुण्य की ज़रूरत नहीं थी।

प्रश्नकर्ता : इस जगत् को चलाने वाला कौन है?

दादाश्री : पुण्य और पाप का परिणाम। पुण्य और पाप के परिणाम से यह जगत् चल रहा है। कोई भगवान नहीं चलाते हैं। कोई इसमें हाथ नहीं डालता है।

पुण्य प्राप्ति की सीढ़ियाँ

प्रश्नकर्ता : अब पुण्य अनेक प्रकार के हैं, तो किस-किस प्रकार के कार्य करें तो पुण्य कहलाएँगे और पाप कहलाएँगे?

दादाश्री : जीवमात्र को सुख देना, उसमें फर्स्ट प्रेफरेन्स (प्रथम महत्व) मनुष्य। मनुष्यों का हो गया तब फिर दूसरा प्रेफरेन्स पँचेन्द्रिय जीव। तीसरे प्रेफरेन्स में चार इन्द्रिय, तीन इन्द्रिय, दो इन्द्रिय, एक इन्द्रिय इस प्रकार से उन्हें सुख दें, उससे ही पुण्य होता है और उन्हें दुःख दें, उससे पाप होता है।

प्रश्नकर्ता : भौतिक सुख मिलते हैं, उन्होंने किस प्रकार के कर्म किए हों तो वे मिलते हैं?

दादाश्री : यदि कोई दुःखी होता हो, उसे सुख दें, उससे पुण्य बंधता है और परिणाम स्वरूप वैसा सुख हमें भी मिलता है। किसी को दुःख दो, तो आपको दुःख मिलता है। आपको पसंद आए वह देना।

दो प्रकार के पुण्य हैं। एक पुण्य से भौतिक सुख मिलते हैं और दूसरा एक ऐसे प्रकार का पुण्य है कि जो हमें 'सच्ची आज़ादी' प्राप्त करवाता है।

वे दोनों माने जाते हैं कर्म ही!

प्रश्नकर्ता : पाप और कर्म एक ही हैं या अलग?

दादाश्री : पुण्य और पाप दोनों ही कर्म कहलाते हैं। परंतु पुण्य का कर्म काटता नहीं है और पाप का कर्म अपनी धारणा के अनुसार होने नहीं देता और काटता है।

जब तक ऐसी मान्यता हैं कि 'मैं चंदूलाल हूँ,' तब तक कर्म बंधते ही रहेंगे। दो प्रकार के कर्म बंधते हैं। पुण्य करे तो सद्भाव के कर्म बाँधते हैं और पाप करे तो दुर्भाव के कर्म बाँधते हैं। जब तक हक़ का और *अणहक्क* (बिना हक़ का) का विभाजन नहीं हो जाता, तब तक जैसा लोगों का देखे, वैसा ही वह भी सीख जाता है। मन में रहता है अलग, वाणी में कुछ तृतियम ही बोलता है और आचरण में तो ओर ही प्रकार का होता है। अर्थात् निरे पाप ही बंधेंगे। इसलिए अभी तो लोगों की पाप की ही कमाई है।

पुण्य-पाप, वह व्यवहार धर्म

प्रश्नकर्ता : तो पुण्य और धर्म में क्या अंतर है?

दादाश्री : पुण्य, वह व्यवहार धर्म है, सच्चा धर्म नहीं है। व्यवहार धर्म अर्थात् खुद सुखी होने के लिए। पुण्य अर्थात् क्रेडिट। इससे हम सुखी हो सकेंगे, क्रेडिट हो तो हम चैन से रह सकेंगे और तब अच्छी तरह से धर्म हो सकेगा और पाप अर्थात् डेबिट। पुण्य नहीं

हो, क्रेडिट नहीं हो, तो हम धर्म करेंगे किस तरह? क्रेडिट हो तो एक ओर शांति रहेगी, तभी हम धर्म कर सकेंगे।

प्रश्नकर्ता : कौन-से कर्म करने से पुण्य होता है और कौन-से कर्म करने से धर्म होता है?

दादाश्री : ये सभी जीव, मनुष्य, पेड़-पौधे, गाय-भैंस, फिर पशु-पक्षी, जलचर वे सभी जीव सुख खोजते हैं और दुःख किसी को पसंद नहीं है। इसलिए आपके पास जो कुछ सुख है, वह दूसरे लोगों को आप दो तो आपके खाते में क्रेडिट होता है, पुण्य बंधता है और दूसरों को दुःख दो तो पाप बंधता है।

प्रश्नकर्ता : तो धर्म किसे कहा जाता है?

दादाश्री : धर्म अर्थात् आत्मधर्म। आत्मा का खुद का धर्म। पाप और पुण्य दोनों अहंकार के धर्म हैं। अहंकार हो तब तक पाप और पुण्य होते हैं। अहंकार जाए तब पाप और पुण्य जाते हैं, तो आत्मधर्म होता है। आत्मा को जानना पड़ेगा, तब ही आत्मधर्म होगा।

पुण्य-पाप से परे, रियल धर्म

रिलेटिव धर्म क्या कहते हैं? अच्छा करो और बुरा मत करना। अच्छा करने से पुण्य बंधता है और बुरा करने से पाप बंधता है।

पूरी ज़िंदगी का बहीखाता सिर्फ पुण्य से ही नहीं भरता है। किसी को गाली दी तो पाँच रुपये उधारी और धर्म किया तो सौ रुपये जमा होते हैं। पाप-पुण्य का जोड़ना-घटाना नहीं होता है। यदि ऐसा होता तो ये करोड़पति पाप जमा ही नहीं होने देते। पैसे खर्च करके उधारी उड़ा देते। परंतु यह तो असल न्याय है। उसमें तो जिस समय जिसका उदय आए, तब वह सहना पड़ता है। पुण्य से सुख मिलता है और पाप के फल का उदय आए तब कड़वा लगता है। फल तो दोनों चखने ही पड़ते हैं।

भगवान क्या कहते हैं कि, तुझे जो फल चखना पुसाता हो, उसका

बीज बोना। सुख पुसाता हो तो पुण्य का और दुःख पुसाता हो तो पाप का बीज बोना, परंतु दोनों रिलेटिव धर्म ही हैं, रियल नहीं हैं।

रियल धर्म में, आत्मधर्म में तो पुण्य और पाप दोनों से मुक्ति चाहिए। रिलेटिव धर्मों से भौतिक सुख मिलते हैं और मोक्ष की ओर प्रयाण होता है, जब कि रियल धर्म से मोक्ष मिलता है। यहाँ 'हमारे' पास रियल धर्म है। उससे सीधे ही मोक्ष मिल जाता है। यहीं पर मोक्ष सुख बरतता है। यहीं पर आधि, व्याधि, *उपाधि* (बाह्य दुःख, बाहर से आ पड़ने वाले दुःख) से मुक्ति मिल जाती है और निरंतर समाधि रहा करती है। निराकुलता उत्पन्न होती है। यहाँ तो आत्मा और परमात्मा की बातें होती हैं।

परमाणु फलीभूत स्वयं सुख-दुःख में

प्रश्नकर्ता : पाप और पुण्य के विभाग किसने बनाए?

दादाश्री : किसी ने नहीं बनाए।

प्रश्नकर्ता : यह पाप है, यह पुण्य है वह सब बुद्धि कहती है, आत्मा को तो पाप-पुण्य कुछ है ही नहीं न?

दादाश्री : नहीं, आत्मा को नहीं है। सामने वाले को दुःख हो वैसी वाणी हम बोलें न, तब वह वाणी ही खुद परमाणुओं को खींचती है। उन परमाणुओं को दुःख का रंग लग जाता है, फिर वे परमाणु जब फल देने लगें, तब दुःख ही देते हैं वे। दूसरी बीच में किसी की मिलावट है ही नहीं।

उसमें जिम्मेदारी किसकी?

प्रश्नकर्ता : एक व्यक्ति को पैसा और एक व्यक्ति को गरीबी, वह किस तरह से आता है? मनुष्य में ही सबने जन्म लिया है तो भी?

दादाश्री : वह ऐसा है, अपना यह जो जन्म होता है न, वह इफेक्ट होता है। इफेक्ट अर्थात् पिछले जन्म में जो कॉज़ेज़ डाले थे,

उनका यह फल है। इसलिए जितना पुण्य होता है, उस पुण्य में क्या क्या होता है? तब कहें, उसमें संयोग सारे अच्छे मिल जाएँ तो मदद ही करते रहते हैं। बंगला बनवाना हो तो बंगला बनता है, मोटर मिलती है! और पाप खराब संयोग लाकर बंगले की नीलामी करवाता है। इसलिए अपने ही कर्म का फल है। उसमें भगवान की कोई दखल है नहीं! यू आर होल एन्ड सोल रिस्पोन्सिबल फॉर योर लाइफ! एक लाइफ नहीं, कितनी ही लाइफ के लिए भगवान की दखल है नहीं इसमें। बिना काम के लोग भगवान के पीछे पड़े हैं।

प्रकार, पुण्य-पाप के

जगत् में आत्मा और परमाणु दो ही हैं। किसी को शांति दी हो, सुख दिया हो तो पुण्य के परमाणु इकट्ठे होते हैं और किसी को दु:ख दिया हो तो पाप के परमाणु इकट्ठे होते हैं। फिर वे ही काटते हैं। इच्छा के अनुसार होता है, वह पुण्य और इच्छा के विरुद्ध होता है, वह पाप। पाप दो प्रकार के हैं। एक पापानुबंधी पाप, दूसरा पुण्यानुबंधी पाप और पुण्य दो प्रकार के हैं, एक पापानुबंधी पुण्य, दूसरा पुण्यानुबंधी पुण्य।

पापानुबंधी पाप

पापानुबंधी पाप अर्थात् अभी पाप भुगतता है और वापस पाप का नया अनुबंध बाँधता है। किसी को दु:ख देता है और फिर वापस खुश होता है।

पुण्यानुबंधी पाप

फिर पुण्यानुबंधी पाप अर्थात् पूर्व के पाप के कारण अभी दु:ख (पाप) भुगतता है पर नीति से और अच्छे संस्कारों के कारण अनुबंध पुण्य के बाँधता है।

प्रश्नकर्ता : यानी दु:ख उपकारी है न?

दादाश्री : नहीं, जिसे 'मैं शुद्धात्मा हूँ' ऐसा भान हो गया है उसके लिए दु:ख उपकारी है, नहीं तो दु:ख में से दु:ख ही जन्म लेता

है। दु:ख में भाव तो दु:ख के ही आते हैं। इस समय पुण्यानुबंधी पाप वाले जीव कम हैं। हैं ज़रूर पर उन्हें भी दूषमकाल बाधक है। क्योंकि ये पाप बाधक हैं। पाप अर्थात् क्या कि संसार व्यवहार चलाने में अड़चन आए वह पाप कहलाता है। यानी बैंक में बढ़ने की बात तो कहाँ गई पर यह रोज़ का व्यवहार चलाने के लिए भी कुछ न कुछ अड़चनें आती रहती हैं। ये अड़चनें आती हैं फिर भी मंदिर जाता है, विचार धर्म के आते हैं, उसे पुण्यानुबंधी पाप कहा है। पुण्य बाँधेगा पर यह दूषमकाल ऐसा है न कि इस पाप से ज़रा मुश्किलें आती हैं, इसलिए वास्तव में जैसे चाहिए वैसे पुण्य नहीं बंधते। अभी तो छूत लग ही जाता है न! मंदिर के बाहर जूते निकाले हों न तो दूसरे से पूछे कि क्यों भाई जूते यहाँ निकाले हैं? तब वह कहेगा कि उस तरफ से जूते चोरी हो जाते हैं, इसलिए यहाँ निकाले हैं। तब अपने मन में भी विचार आता है कि उस तरफ से ले जाते हैं, इसलिए दर्शन के समय भी चित्त ठिकाने नहीं रहता है!

पापानुबंधी पुण्य

पूर्व के पुण्य से आज सुख भोगता है, परंतु भयंकर पाप के अनुबंध बाँधता है। अभी सब ओर पापानुबंधी पुण्य है। किसी सेठ का ऐसा बंगला हो तब सुख से बंगले में नहीं रह सकता। सेठ पूरा दिन पैसों के लिए बाहर होता है। जबकि सेठानी मोह बाज़ार में सुंदर साड़ी के पीछे होती है और सेठ की बेटी गाड़ी लेकर घूमने निकली होती है। नौकर अकेले घर पर होते हैं और पूरा बंगला मटियामेट हो जाता है। पुण्य के आधार पर सभी कुछ, बंगला मिला, मोटर मिली, फ्रिज मिला। ऐसा पुण्य हो फिर भी पाप के अनुबंध बाँधें, वैसे करतूत होते हैं। लोभ–मोह में समय जाता है और भोग भी नहीं सकते। पापानुबंधी पुण्य वाले लोग तो विषयों की लूटबाज़ी ही करते हैं।

इसलिए तो बंगले हैं, मोटरें हैं, वाइफ है, बच्चे हैं, सबकुछ है पर पूरा दिन हाय, हाय, हाय, हाय, पैसे कहाँ से लाऊँ? ऐसे पूरे दिन निरे पाप ही बाँधता रहता है। इस भव में पुण्य भोगता है और अगले

भव के पाप बाँध रहा है। पूरा दिन दौड़भाग-दौड़भाग और कैसा? बाय (खरीदो), बॉरो (उधार लो), एन्ड स्टील (और चुरा लो)। कोई नियम नहीं। बाय तो बाय, नहीं तो बॉरो, नहीं तो स्टील। किसी भी प्रकार से वह हितकारी नहीं कहलाता।

अभी आपके शहर के आस-पास पुण्य बहुत बड़ा दिखता है। वह सब पापानुबंधी पुण्य है। अर्थात् पुण्य है, बंगले हैं, मोटरें हैं, घर पर सारी सुविधाएँ हैं, वह सब पुण्य के आधार पर है, पर वह पुण्य कैसा है? उस पुण्य में से विचार खराब आते हैं कि किसका ले लूँ, कहाँ से लूट लूँ? कहाँ से इकट्ठा करूँ? किसका भोग लूँ? अर्थात् *अणहक्क* का भोगने की तैयारी होती है, *अणहक्क* की लक्ष्मी भी छीन लेते हैं, वह पापानुबंधी पुण्य है। मनुष्यत्व अर्थात् मोक्ष जाने का टाइम मिला है, जबकि यह तो इकट्ठा करने में पड़ा हुआ है, वह पापानुबंधी पुण्य है। उसमें पाप ही बंधते रहते हैं, यानी वह भटकाए ऐसा पुण्य है।

कितने लोग तो छोटे स्टेट के ठाकुर हों न, ऐसे ऐशो-आराम से जीते हैं। करोड़ो रुपये के फ्लेट में रहते हैं। पर ज्ञानी क्या देखते होंगे? ज्ञानी को करुणा आती है बेचारों के लिए। जितनी करुणा बोरीवली वालों (मुंबई का मध्यमवर्गीय इलाका) के ऊपर नहीं आती, उतनी करुणा इनके ऊपर आती है। ऐसा किसलिए?

प्रश्नकर्ता : क्योंकि यह तो पापानुबंधी पुण्य है इसलिए।

दादाश्री : पापानुबंधी पुण्य तो है, पर ओहोहो! इन लोगों के बर्फ जैसे पुण्य हैं। जैसे बर्फ पिघलता है, वैसे निरंतर पिघलता ही रहता है, वह ज्ञानियों को दिखता है कि यह पिघल रहा है! मछली तड़पती है, वैसे तड़प रहे हैं! इसके बदले तो बोरीवली वाले के पानी जैसे पुण्य, उसमें भला पिघलने का क्या रहा? पर यह तो पिघल रहा है।

उन भोगने वालों को पता नहीं और उसका सब *कढ़ापा-अजंपा* (कुढ़न, क्लेश, बेचैनी, अशांति, घबराहट), भोगने का रहा ही कहाँ? अभी इस कलियुग में भोगना कैसा यह? यह तो कुरूप दिखता है

उल्टा। आज से साठ वर्ष पहले जो रूप था, वैसा तो रूप ही नहीं है अभी। शांति वाला मुंबई था।

अब वह रूप ही नहीं है। साठ साल पहले तो मरीन लाईन्स पर रहते हो न तो देवगति जैसा लगता था। अभी तो हकबकाए से दिखते हैं वहाँ! पूरा दिन अकुलाए हुए और परेशान से ऐसे-वैसे लोग दिखते हैं। उन दिनों तो सुबह पहले बैठकर पेपर पढ़ रहे होते, तब ऐसा लगता था जैसे सारे देवी-देवता पेपर पढ़ रहे हों। *कढ़ापा* नहीं, *अजंपा* नहीं। सुबह पहले मुंबई समाचार आया हो, और अन्य पेपर थे पर उनके नाम आलोप हो गए हैं सभी। मैं भी मरीन लाईन्स उतरता था। परंतु लोगों को तो शांति बहुत थी उस समय! इतनी हाय-हाय नहीं थी। इतना लोभ नहीं, इतना मोह नहीं, इतनी तृष्णा नहीं और शुद्ध घी में तो शंका ही नहीं करनी पड़ती थी, शंका ही नहीं आती थी। अभी तो शुद्ध लेने जाएँ तो भी नहीं मिलता।

मलबार हिल जितना पुण्य हो, पर बर्फ के पहाड़ हैं वे पुण्य। बड़ा मलबार हिल जितना बर्फ हो, परंतु वह दिनोंदिन क्या होता जाएगा? चौबीसों घंटे पिघलता ही रहेगा निरंतर। पर उसे खुद को मालूम नहीं इस मलबार हिल में कि इन सब जगह रहने वाले लोगों को, टोप क्लास के लोगों को कि अपना क्या हो रहा है? दिन-रात पुण्य पिघलते ही रहते हैं, ये तो करुणा खाने जैसे हाल हैं! यहाँ से क्या खाते-खाते, क्या खाना पड़ेगा, वह खबर नहीं इसलिए यह सब चल रहा है। पापानुबंधी पुण्य है। पूरा दिन ही हाय पैसा, हाय पैसा! कहाँ से पैसे इकट्ठे करूँ, पूरे दिन उसके ही विचारों में, कहाँ से विषयों का सुख भोग लूँ, कुछ ऐसा करूँ, वैसा करूँ, पैसा! हाय, हाय, हाय, हाय। और देखो बड़े-बड़े पहाड़ पुण्य के पिघलने लगे हैं। वह पुण्य खत्म हो जाने वाला है, वापस, थे वैसे ही, दोनों हाथ खाली के खाली। फिर चार पैरों में जाकर ठिकाना नहीं पड़ेगा। इसलिए ज्ञानी करुणा खाते हैं कि अरेरेरे! इस दुःख में से छूटे तो अच्छा। कुछ अच्छा संयोग मिल जाए तो अच्छा। देखो न इनको संयोग अच्छा मिल गया है। ये सेठ तो कब वहाँ से छूटें और कब यहाँ पर आ जाएँ,

ऐसी हमारी इच्छा ज़रूर है पर कोई मेल नहीं पड़ता न और जिनका मेल पड़ता है वे आते भी हैं फिर।

प्रश्नकर्ता : दादा, दूसरे पढ़ने वालो को मोक्ष की अन्य बातें समझ में नहीं आती, पर इन दुःख की बातों के बारे में तो बहुत समझ में आ जाता है।

दादाश्री : वह तो समझ में आएगा, सभी को समझ में आएगा, यह दीये जैसी बात है! अरे मोक्ष की बात को रखो दूर, पर दुःख का निवारण तो हुआ आज! संसारी दुःख का अभाव तो हुआ! और वही मुक्ति की पहली निशानी है। दुःख मुक्त हुए, संसार के दुःखों से।

ओवरड्राफट का व्यय एडवान्स में!

चार घर के मालिक, परंतु घर पर पाँच रुपये नहीं होते और भावनगर के राजा जैसा रौब होता है! तब उस अहंकार का क्या करना है?

प्रश्नकर्ता : दादा, पर कितनी बार व्यवहार में ऐसा होता है कि मनुष्य ऐसा सब रखता है न, उसे ऐसा सब मिल आता है।

दादाश्री : मिल आता है, पर सारे पाप बाँधकर मिलता है। उसका नियम ही ऐसा है, तेरा सबकुछ खर्च करके, तेरा काउन्टर वेट रखकर तू यह लेता है और आज नहीं हो तो ओवरड्राफ्ट लेता है। वह ओवरड्राफ्ट लेकर फिर मनुष्य में से जानवर में ही जाता है। उठापटक करके लिया हुआ काम का नहीं है, वह तो अपने पुण्य का सहज मिला हुआ होना चाहिए।

इसलिए मिल जाता है, पर सभी ओवरड्राफ्ट लेते हैं। मन में से चोरी के विचार जाते नहीं, झूठ के विचार, कपट के विचार जाते नहीं हैं, प्रपंच के विचार जाते नहीं हैं। फिर क्या, निरे पाप ही बंधते रहेंगे न? यह तो सब नहीं होना चाहिए, मिल जाए तो भी! इसलिए मैं तो भेख (संन्यास) लेने को तैयार था कि इस तरह यदि दोष बंधते

हों तो संन्यास लेना अच्छा। निरी भयंकर *उपाधियाँ,* इतने ताप में उबल गए! अज्ञानता में तो बहुत समझदार व्यक्ति, एक घंटे ही यदि उबलता है, उस उमस के कारण मन में ऐसा होता है कि अरे, अब कुछ नहीं चाहिए। मोटी बुद्धि वाले को उमस समझ में कम आती है, पर सूक्ष्म बुद्धि वाले को उमस सहन किस तरह से हो? वह तो आश्चर्य है!

पुण्यानुबंधी पुण्य

एक पुण्य ऐसा होता है जो भटकाता नहीं है, वैसा पुण्य इस काल में बहुत ही कम होता है और वह भी थोड़े समय बाद खत्म हो जाएगा, वह पुण्यानुबंधी पुण्य कहलाता है। जिस पुण्य के कर्म करें, अच्छे कर्म और उसमें सांसारिक हेतु नहीं हो, सांसारिक कोई भी इच्छा नहीं हो, उस समय जो पुण्य बाँधे, वे पुण्यानुबंधी पुण्य।

पुण्य भोगते हैं और साथ में आत्मकल्याण हेतु अभ्यास, क्रिया करते हैं। पुण्य भोगते हैं और नया पुण्य बाँधते हैं, जिससे अभ्युदय से मोक्षफल मिलता है। पुण्यानुबंधी पुण्य किसे कहा जाता है कि जो आज पुण्य होता है, मज़े से सुख भोग रहे हों, कोई अड़चन नहीं पड़ती हो और फिर वापस धर्म का और धर्म का ही पूरे दिन करते रहते हैं, वह पुण्यानुबंधी पुण्य है। वैसे विचार आएँ न, सिर्फ धर्म के ही, सत्संग में रहने के ही विचार आएँ। और जिस पुण्य से सुख-सुविधाएँ बहुत नहीं हों, पर ऊँचे विचार आएँ कि किस प्रकार से किसी को दु:ख नहीं हो ऐसा व्यवहार करूँ, ऐसा वर्तन करूँ, भले ही खुद को थोड़ी अड़चन पड़ती हो, उसमें हर्ज नहीं है, पर किसी को *उपाधि* में नहीं डालूँ, वह पुण्यानुबंधी पुण्य कहलाता है इसलिए नये अनुबंध भी पुण्य के होते हैं।

प्रश्नकर्ता : पुण्यानुबंधी पुण्य का उदाहरण दीजिए।

दादाश्री : आज किसी व्यक्ति के पास मोटर-बंगला वगैरह सभी साधन हैं, पत्नी अच्छी है, बच्चे अच्छे हैं, नौकर अच्छे हैं, यह सबकुछ जो अच्छा मिला है, उसे क्या कहते हैं? लोग तो कहेंगे कि,

'पुण्यशाली है।' अब, वह पुण्यशाली क्या कर रहा है, वह हम देखें तो पूरे दिन साधु-संतों की सेवा करता है, दूसरों की सेवा करता है और मोक्ष की तैयारी करता है। ऐसा सब करते-करते उसे मोक्ष के साधन भी मिल आते हैं। अभी पुण्य है और नया पुण्य बाँधता है और कम पुण्य मिलें, पर विचार फिर वैसे ही आते हैं, 'मोक्ष में जाना है' वह पुण्यानुबंधी पुण्य। ये आप मुझे मिले वह आपका कोई पुण्यानुबंधी पुण्य होगा न, उसके आधार पर मिले हैं। ज़रा-सा यों ही छींटा पड़ गया होगा, नहीं तो मिल ही नहीं सकते।

सारे हठ से किए हुए काम, हठाग्रही तप, हठाग्रही क्रिया, उससे पापानुबंधी पुण्य बंधता है। जबकि समझकर किया गया तप, क्रियाएँ, खुद के आत्मकल्याण हेतु सहित किए हुए कर्मों से पुण्यानुबंधी पुण्य बंधता है और किसी काल में ज्ञानी पुरुष मिल जाते हैं और मोक्ष में जाता है।

दोनों दृष्टियाँ अलग-अलग

प्रश्नकर्ता : अभी के समय में सामान्य व्यक्ति को ऐसा लगता है कि खराब रास्ते अथवा खराब कर्मों द्वारा ही भौतिक सुख और सुविधाएँ मिलती हैं, इसलिए उनका कुदरती न्याय के ऊपर से विश्वास उठता जाता है और खराब कर्म करने के लिए प्रेरित होता है।

दादाश्री : हाँ, वह सारा सामान्य व्यक्ति को वैसा लगता है। खराब रास्ते और खराब कर्मों द्वारा ही भौतिक सुख-सुविधाएँ मिलती हैं, वह इसलिए कि यह कलियुग है और दूषमकाल है। लोगों को, भौतिक सुख और सुविधाएँ पुण्य के बिना नहीं मिलती हैं। कोई भी सुविधा पुण्य के बिना नहीं मिलती। एक भी रुपया पुण्य के बिना हाथ में आता नहीं है।

पापानुबंधी पुण्य और एक पुण्यानुबंधी पुण्य, इन दोनों को पहचानने के लिए अपनी समझ शक्ति चाहिए।

इसलिए खुद भुगतता है क्या? पुण्य, फिर भी क्या बाँध रहा

है? पाप बाँध रहा है। इसलिए हमें ऐसा लगता है कि ऐसे पाप के खराब कर्म करता है और सुख किस तरह भोगता है? नहीं, भोगता है वह तो पुण्य है, गलत नहीं है। कभी भी पाप का फल सुख नहीं होता है। यह तो नये सिरे से उसकी आने वाली ज़िंदगी खत्म कर रहा है। इसलिए आपको ऐसा लगता है कि यह व्यक्ति ऐसा क्यों कर रहा है?

और फिर कुदरत उसे हेल्प भी करती है। क्योंकि कुदरत उसे नीचे ले जानी वाली है, अधोगति में, इसलिए उसे हेल्प करती है। और नया चोर हो न और आज जेब में हाथ डाला हो, तो उसे पकड़वा देती है कि भाई ना, इसमें पड़ जाएगा तो नीचे चला जाएगा। नये चोर को पकड़वा देती है, किसलिए? उर्ध्वगति में ले जाना है और वह पक्का चोर है, उसे जाने देती है। निचली गति में जाओ, बहुत मार खाओ, नया चोर बन रहा हो तो पकड़ा जाता है या नहीं पकड़ा जाता?

प्रश्नकर्ता : पकड़ा जाता है।

दादाश्री : हाँ, और पक्के चोर पकड़े नहीं जाते फिर। सरकार ऐसा करती है, वैसा करती है, पर वह किसी में भी पकड़ा नहीं जाता। वह किसी के जाल में ही नहीं आता है। सभी को बेच खाए ऐसे हैं! कितने कहते हैं न, इन्कम टैक्स वालों को जेब में डालकर घूमता हूँ। अपनी जोखिमदारी पर बोलता है न! ये सारी क्रियाएँ वह अपनी जिम्मेदारी पर करता है न? क्या हमारी जिम्मेदारी पर है?

पापानुबंधी पुण्य की लक्ष्मी

पापानुबंधी पुण्य की लक्ष्मी मतलब कौन सी? वह लक्ष्मी आए तब फिर वह कहाँ से ले लूँ, किसका ले आऊँ, *अणहक्क* का भोग लूँ, *अणहक्क* का छीन लूँ, वैसे सारे पाशवता के विचार आते हैं। किसी को मदद करने का विचार तो नाम मात्र को भी नहीं आता। और उसमें भी दान करें न तो भी नाम कमाने के लिए, किस तरह

मैं नाम कमा लूँ? बाकी, किसी के दिल को ठंडक नहीं पहुँचाता। यहाँ दिल को ठंडक पहुँचती है, ज्ञानी पुरुष की हाज़िरी में। पूरी रात दिल को ठंडक लगती रहती है और दिल में ठंडक हो, वह तो पाँच-पाँच लाख रुपये देने के बराबर है, एक एक व्यक्ति को। फिर भी दिल ठरेगा नहीं हमेशा, रुपये देने से उल्टी *उपाधि* होती है।

इसलिए यह पापानुबंधी पुण्य है, उनसे यहाँ आया ही नहीं जाएगा। इसलिए अपने यहाँ ऐसे लक्ष्मीपति आ नहीं पाते। यहाँ तो पुण्यानुबंधी पुण्य, सच्ची लक्ष्मी हो, ऐसे ही इकट्ठे होते हैं। सच्ची मतलब दूसरा कुछ नहीं, इस काल के हिसाब से बिल्कुल सच्ची तो होती नहीं। हमारे घर पर भी बिल्कुल सच्ची नहीं है। पर इस काल के हिसाब से ये अच्छे विचार होते हैं कि इसे किस प्रकार से सुख हो, किस प्रकार से उसे ज्ञान प्राप्त हो, धर्म के विचार आएँ, वह अच्छी लक्ष्मी कहलाती है। पुण्यानुबंधी पुण्य की लक्ष्मी कहलाती है। वह पुण्यानुबंधी पुण्य मतलब पुण्य है और वापस नया पुण्य बाँध रहा है। विचार सब अच्छे हैं और दूसरे का पुण्य होता है और विचार खराब हैं, मतलब क्या भोग लूँ, कहाँ से ले आऊँ, पूरा दिन, रात को भी सोते-सोते मशीन चलाता ही रहता है, पूरी रात।

और फिर उन लोगों के वहाँ दर्शन-पधरावनी करने के लिए मुझे बुलाते हैं, वहाँ पर मुँबई में। क्योंकि लोग जानते हैं इसलिए दर्शन के लिए घर पर ले जाते हैं। वहाँ पर जाते हैं, तब वैसे तो करोड़ों रुपयों का मालिक होता है, पर जैसे मुर्दे को ही बैठाकर रखा हो न, वैसा दिखे हम लोगों को। वह जय-जय करता है न! मैं समझ जाता हूँ कि ये बेचारे मुर्दे हैं। फिर वहाँ पर देखता हूँ कि कौन-कौन अच्छे हैं? वहाँ उनके नौकर मिलते हैं न, अरे! शरीर मज़बूत, लाल, लाल.... फिर वे रसोईये मिलते हैं न, वे तो तुंबे जैसे, हाफूज़ के आम ही देख लो न! तब मैं समझ जाता हूँ कि ये सेठ लोग अधोगति में जाने वाले हैं, उसके आज ये चिन्ह दिख रहे हैं।

बत्तीस भोजन वाली थाली हो, पर वह तो खा नहीं सकता।

हम सब साथ में खाना खाएँ, परंतु सेठ को हम कहें, क्यों आप नहीं खा रहे हैं? तब कहेगा, मुझे डायाबिटीज़ है और ब्लडप्रेशर है।

अब सेठ को डॉक्टर ने कहा होता है कि 'देखो, ब्लडप्रेशर है आपको, डायबिटीज़ है, कुछ खाना करना नहीं है। बाजरे की रोटी और ज़रा दही खाना हं.., दूसरा कुछ खाना-करना नहीं। अरे भाई, हमारे यहाँ हम बैल को खेत में ले जाते हैं, वह बैल खाता क्यों नहीं है? खेत में है फिर भी? तब कहे, नहीं, छींका बाँधा हुआ है। यहाँ मुँह पर बाँधते हैं न कुछ? क्या कहते हैं उसे?

प्रश्नकर्ता : जाली।

दादाश्री : हमारे वहाँ 'शीकी' कहते हैं उसे। वह बाँधी हुई होती है न, बेचारे को खाना हो तो भी नहीं खा सकता। डॉक्टर ने कहा होता है कि मर जाओगे इसलिए... वैसा इन लोगों को छीका बाँधा हुआ होता है।

अर्थात् निरी नर्क की वेदना भोग रहे हैं। मैं सभी सेठों के वहाँ गया हुआ हूँ। फिर यहाँ पर दर्शन करवाता हूँ, तब कुछ शांति होती है। मैं कहता हूँ दादा भगवान का नाम लेते रहना। क्योंकि ज्ञान तो उनके हिसाब में आता ही नहीं है। उनके लिए व्यवस्था करें न तो भी आ ही नहीं सकता। इसलिए महादु:ख है वह तो।

पुण्यशाली ही भोगना जानता है

लक्ष्मी मनुष्य को मज़दूर बनाती है। यदि लक्ष्मी ज़रूरत से ज़्यादा आ जाए, तब फिर मनुष्य मज़दूर जैसा हो जाता है। उसके पास लक्ष्मी अधिक है पर साथ-साथ वह दानेश्वर हैं, इसलिए अच्छा है। नहीं तो मज़दूर ही कहलाएगा न! और पूरा दिन कड़ी मज़दूरी ही करता रहता है, उसे पत्नी की भी नहीं पड़ी होती, बच्चों की नहीं पड़ी होती, किसी की भी नहीं पड़ी होती है, सिर्फ लक्ष्मी की ही पड़ी होती है। इसलिए लक्ष्मी मनुष्य को धीरे-धीरे मज़दूर बना देती है और फिर उसे तिर्यंच गति में ले जाती है। क्योंकि पापानुबंधी पुण्य

है न! पुण्यानुबंधी पुण्य हो तब तो हर्ज नहीं है। पुण्यानुबंधी पुण्य किसे कहते हैं कि पूरे दिन में आधा घंटा ही मेहनत करनी पड़े। वह आधे घंटे मेहनत करे तो भी सारा काम सरलता से धीरे-धीरे चलता रहता है।

यह जगत् तो ऐसा है। उसमें भोगने वाले भी होते हैं और मेहनत करने वाले भी होते हैं, सब मिलाजुला होता है। मेहनत करने वाले ऐसा समझते हैं कि 'यह मैं कर रहा हूँ।' उसका उनमें अहंकार होता है। जबकि भोगने वाले में अहंकार नहीं होता, तब उन्हें भोक्तापन का रस मिलता है। उस मेहनत करने वाले को अहंकार का गर्वरस मिलता है।

एक सेठ मुझे कहता है, 'मेरे बेटे को कुछ कहिए न, मेहनत नहीं करनी है। चैन से भोगता है।' मैंने कहा, 'कुछ कहने जैसा ही नहीं है। वह उसके खुद के हिस्से का पुण्य भोग रहा है, उसमें हम किसलिए दखल करें?' तब वह मुझे कहता है कि, 'उन्हें सयाने नहीं बनाना क्या?' मैंने कहा, जगत् में जो भोगता है, वह सयाना कहलाता है। बाहर डाल दे वह पागल कहलाता है और मेहनत करता रहे वह मज़दूर कहलाता है। परंतु मेहनत करता है उसे अहंकार का रस मिलता है न! लंबा कोट पहनकर जाता है इसलिए लोग 'सेठजी आए, सेठजी आए' करते हैं, इतना ही बस और भोगने वाले को ऐसा कोई सेठ-वेठ की पड़ी नहीं होती। 'हमने तो अपना भोगा उतना सच्चा' कहता है।

अभी जो है, वह लक्ष्मी ही नहीं कहलाती। यह तो पापानुबंधी पुण्य वाली लक्ष्मी है। तो पुण्य ऐसे बाँधे थे या अज्ञान तप किए थे, उसका पुण्य बंधा हुआ है। उसका फल आया है, उसमें लक्ष्मी आई। यह लक्ष्मी व्यक्ति को पागल-बावरा बना देती है। इसे सुख कैसे कहा जाए? सुख तो, पैसे का विचार ही नहीं आए, वह सुख कहलाता है। हमें तो वर्ष में एकाध बार विचार आता है कि जेब में पैसे हैं या नहीं?

प्रश्नकर्ता : बोझ जैसा लगता है?

दादाश्री : नहीं, बोझ तो हमें होता ही नहीं। पर हमें वह विचार ही नहीं होता न! किसलिए विचार करें? सब आगे-पीछे तैयार ही होता है। जैसे खाने-पीने का आपके टेबल पर आता है या नहीं आ जाता?

भुगतान, रुपयों का या वेदनीय का?

यह तो जिसे पत्थर लगा उसकी ही भूल। भुगते उसकी भूल सिर्फ उतना ही नहीं पर भुगतने का इनाम भी है। पाप का इनाम मिले तो वह उसके बुरे कर्तव्य का दंड और फूल चढ़ें तो वह उसके अच्छे कर्तव्य के पुण्य का इनाम, फिर भी दोनों भुगतान ही है, अशाता का अथवा शाता का।

कुदरत क्या कहती है? 'उसने कितने रुपये खर्च किए, वह हमारे यहाँ नहीं देखा जाता। वह तो वेदनीय क्या भोगा, शाता या अशाता, उतना ही हमारे यहाँ देखा जाता है। रुपये नहीं होंगे तो भी शाता भोगेगा और रुपये होंगे फिर भी अशाता भोगेगा।' यानी जो कुछ भी शाता या अशाता वेदनीय भोगता है, वह रुपयों पर आधारित नहीं है।

सच्चा धन सुख देता है

दस लाख रुपये पिता ने बेटे को देकर पिता कहें कि, 'अब मैं आध्यात्मिक जीवन जीऊँगा!' तो अब वह बेटा हमेशा शराब में, मांसाहार में, शेयर बाजार में, सभी में वह पैसा खो देता है। क्योंकि जो पैसे गलत रास्ते इकट्ठे हुए हैं, वे खुद के पास नहीं रहते। आज तो सही धन भी, सही मेहनत का धन भी नहीं रह पाता, तो गलत धन कैसे रहेगा? अर्थात् पुण्य वाले धन की आवश्यकता होगी। जिसमें अप्रमाणिकता नहीं हो, दानत साफ हो, वैसा धन होगा तो वह सुख देगा। नहीं तो, अभी तो दूषमकाल का धन, वह भी पुण्य का ही कहलाता है, लेकिन पापानुबंधी पुण्य का है। वह निरे पाप ही बंधवाएगा! इसके बजाय उस लक्ष्मी से कहना कि, 'तू आना ही मत, उतनी दूरी पर ही रहना। उससे हमारी शोभा रहेगी और तेरी भी शोभा बढ़ेगी।'

ये जो बंगले बनते हैं, उन सब में साफ तौर पर पापानुबंधी पुण्य दिखता है। इसमें यहाँ शायद ही कोई होगा, हज़ारों में एकाध व्यक्ति, कि जिसका पुण्यानुबंधी पुण्य होगा। बाकी ये सभी पापानुबंधी पुण्य हैं। इतनी लक्ष्मी तो होती होगी कभी भी? निरे पाप ही बाँध रहे हैं। ये तो तिर्यंच की रिटर्न टिकट लेकर आए हुए हैं!

एक मिनट भी नहीं रहा जा सके, ऐसा है यह संसार! ज़बरदस्त पुण्य होते हुए भी भीतर दाह कम नहीं होता। अंतरदाह निरंतर जलता ही रहता है! अंतरदाह किसलिए होता है? अंतरदाह पाप-पुण्य के अधीन नहीं है। अंतरदाह 'रोंग बिलीफ़' के अधीन है। चारों ओर से सभी फर्स्ट क्लास संयोग हों फिर भी अंतरदाह चलता ही रहता है, अब वह मिटे कैसे? पुण्य भी अंत में खत्म हो जाते हैं। दुनिया का नियम है कि पुण्य खत्म हो जाते हैं। तब क्या होता है? पाप का उदय होता है। यह तो अंतरदाह है। पाप के उदय के समय जब बाहरी दाह उत्पन्न होगा, उस घड़ी तेरी क्या दशा होगी? इसलिए भगवान ऐसा कहते हैं कि 'सावधान हो जा।'

पुण्य से ही प्राप्त पैसा

प्रश्नकर्ता : इस समय में तो पापी के पास ही पैसा है।

दादाश्री : पापी के पास नहीं है। मैं आपको समझाता हूँ ठीक से। आप मेरी बात समझो एक बार कि पुण्य के बिना तो पैसा आपको छुएगा तक नहीं। काले बाज़ार का भी नहीं छुएगा या सफेद बाज़ार का भी नहीं छुएगा। पुण्य के बिना तो चोरी का भी पैसा हमें नहीं छुएगा। पर वह पापानुबंधी पुण्य है। आप कहते हो वह पाप, वह अंत में पाप में ही ले जाता है। वह पुण्य ही अधोगति में ले जाता है।

खराब पैसा आए तब खराब विचार आते हैं कि किसका भोग लूँ, पूरा दिन मिलावट करने के विचार आते हैं, वह अधोगति में जाता है। पुण्य भोगता नहीं है और अधोगति में जाता है। इसके बदले पुण्यानुबंधी पाप अच्छा कि आज ज़रा सब्ज़ी लाने में अड़चन पड़ती

है, पर पूरा दिन भगवान का नाम तो लिया जाता है और पुण्यानुबंधी पुण्य हों, तो वह पुण्य भोगता है और नया पुण्य उत्पन्न होता है।

...तब तो परभव का भी बिगड़े

प्रश्नकर्ता : आज का टाइम ऐसा है कि इंसान खुद का भरण-पोषण भी पूरा नहीं कर सकता। वह पूरा करने के लिए उसे सही-गलत करना पड़े तो क्या ऐसा किया जा सकता है?

दादाश्री : वह तो ऐसा है न, कि जैसे उधार लेकर घी पीते हैं, उसके जैसा है यह व्यापार। इस गलत किए हुए से तो अभी टूट रहे हैं। अभी टूट रहे हैं, उसका क्या कारण है? पाप हैं, इसलिए आज कमी पड़ रही है। सब्ज़ी नहीं है, दूसरा कुछ नहीं है। फिर भी यदि अभी अच्छे विचार आ रहे हों, धर्म में-मंदिर में जाने के, उपाश्रय में जाने के, कुछ सेवा करने के, ऐसे विचार आ रहे हों तो आज पाप है, फिर भी वह पुण्य बाँध रहा है। लेकिन पाप हों और वह फिर से पाप ही बाँधे, ऐसा नहीं होना चाहिए। पाप हों, कमी हो, और इस तरह उल्टा करें तो फिर अपने पास बचा क्या?

वह अक्ल का या मेहनत का उपार्जन?

बात तो समझनी पड़ेगी न? ऐसे कब तक पोल चलेगी? और *उपाधि* पसंद तो है नहीं। यह मनुष्य देह *उपाधि* से मुक्त होने के लिए है। सिर्फ पैसे कमाने के लिए नहीं है। पैसा किससे कमाते होंगे? मेहनत से कमाते होंगे या बुद्धि से?

प्रश्नकर्ता : दोनों से।

दादाश्री : यदि पैसे मेहनत से कमाए जाते तो इन मज़दूरों के पास बहुत सारे पैसे होते। क्योंकि ये मज़दूर ही अधिक मेहनत करते हैं न! और यदि पैसे बुद्धि से ही कमाए जाते तो ये सारे पंडित हैं ही न! पर उनके तो चप्पल भी आधा घिस गए होते है। पैसे कमाना बुद्धि का खेल नहीं है या मेहनत का फल नहीं है। वह तो आपने

पूर्व में पुण्य किया हुआ है, उसके फल स्वरूप आपको मिलता है। और नुकसान, वह पाप किया हुआ है, उसके फल स्वरूप है। पुण्य और पाप के अधीन लक्ष्मी है। इसलिए लक्ष्मी यदि चाहिए हो तो हमें पुण्य-पाप का ध्यान रखना चाहिए।

भूलेश्वर में जिसकी आधी चप्पलें घिस गई हों, वैसे बहुत अक्लमंद लोग हैं। कोई व्यक्ति महीने के पाँच सौ कमाता है, कोई सात सौ कमाता है, कोई ग्यारह सौ कमाता है। शोर मचाकर रख देता है कि ग्यारह सौ कमाता हूँ। अरे, पर तेरी चप्पल तो आधी की आधी ही है। देखो अक्ल के कारखाने! और कमअक्ल वाले बहुत कमाते हैं। अक्ल वाला पासे डाले तो सीधे पड़ते हैं या मूर्ख मनुष्य के पासे सीधे पड़ते हैं?

प्रश्नकर्ता : जिसके पुण्य हों, उसके सीधे पड़ते हैं।

दादाश्री : बस, उसमें तो अक्ल चलती ही नहीं न! अक्ल वाले का तो बल्कि विपरीत होता है। अक्ल तो उसे दु:ख में हेल्प करती है। दु:ख में किस तरह सब वापस ठीक कर ले, वैसी उसे हेल्प करती है।

अक्ल मुनीम की और पुण्य सेठ का

लक्ष्मीजी किससे आती हैं और किससे जाती हैं, वह हम जानते हैं। लक्ष्मीजी मेहनत से नहीं आती या अक्ल से या ट्रिक काम में लेने से नहीं आती। लक्ष्मी किससे कमाई जाती है? यदि सीधी तरह से कमा सकते तो अपने मंत्रियों को चार आने भी नहीं मिलते। यह लक्ष्मी तो पुण्य से कमाई जाती है। पागल हो तो भी पुण्य से कमाया करता है।

लक्ष्मी तो पुण्य से आती है। बुद्धि का उपयोग करने से भी नहीं आती। इन मिल मालिकों और सेठों में एक छींटा भी बुद्धि का नहीं होता, पर लक्ष्मी ढेरों आती है और उनका मुनीम बुद्धि चलाता

रहता है, इन्कम टैक्स की ऑफिस में जाता है तब साहब की गालियाँ भी मुनीम ही खाता है, जबकि सेठ तो आराम से सोया हुआ होता है।

एक सेठ थे। सेठ और उनका मुनीम दोनों बैठे हुए थे, अहमदाबाद में ही तो न! लकड़ी का तख्ता उसके ऊपर गद्दी, वैसा पलंग, सामने टिपोई! और उसके ऊपर भोजन का थाल था। सेठ भोजन लेने बैठे थे। सेठ की डिज़ाईन बताऊँ। जमीन से तीन फीट ऊँचे बैठे थे, जमीन से ऊपर डेढ़ फीट सिर। चेहरे का त्रिकोण आकार और बड़ी-बड़ी आँखें और बड़ा नाक, होंठ तो मोटे-मोटे पकौड़े जैसे और पास में फोन। खाते-खाते फोन आता और वे बात करते। सेठ को खाना तो आता नहीं था। दो-तीन टुकड़े पूरी के नीचे गिर गए थे और चावल तो कितना ही बिखरा हुआ था नीचे। फोन की घंटी बजे और सेठ कहते कि, 'दो हज़ार गठरियाँ ले लो।' और दूसरे दिन दो लाख रुपये कमा लेता। मुनीमजी बैठे-बैठे सिरफोड़ी करते थे और सेठ बिना मेहनत के कमाते थे। इस तरह सेठ तो अक्ल से ही कमाता हुआ दिखता है। पर वह अक्ल खरे समय पर पुण्य के कारण प्रकाश देती है। यह पुण्य से है। वह तो सेठ को और मुनीमजी को साथ में रखो तो समझ में आए। खरी अक्ल तो सेठ के मुनीम में ही होती है, सेठ में नहीं। यह पुण्य कहाँ से आया? भगवान को समझकर भजना की, उससे? नहीं, बिना समझे भजना की, इसलिए। किसी के ऊपर उपकार किया, किसी का भला किया, इन सबसे पुण्य बंध गया।

श्रीमंतता किसे मिलती है?

क्या किया हो तो श्रीमंतता आती है? कितनी अधिक लोगों की हेल्प की हो तब लक्ष्मी अपने यहाँ आती है! नहीं तो लक्ष्मी आती नहीं। लक्ष्मी तो देने की इच्छा वाले के वहीं पर आती है। जो दूसरों के लिए घिसे, धोखा खाए, नोबेलिटी का उपयोग करे, उसके पास लक्ष्मी आती है। चली गई ऐसा लगता ज़रूर है, पर आकर फिर वहीं पर खड़ी रहती है।

प्रश्नकर्ता : आपने लिखा है कि जो कमाता है, वह बड़े मन

वाला ही कमाता है। देने-लेने में जो बड़ा मन रखे वही कमाई करता है। बाकी, संकुचित मन वाला कमाता ही नहीं कभी भी!

दादाश्री : हाँ, सभी प्रकार से नोबल हो, तो लक्ष्मी वहाँ जाती है। इन पाजियों के पास लक्ष्मी जाती होगी?

प्रश्नकर्ता : यानी पुण्य के कारण मनुष्य धनवान बनता है?

दादाश्री : धनवान होने के लिए तो पुण्य चाहिए। पुण्य हो तो पैसा आता है।

प्रश्नकर्ता : पैसे के लिए तो लिखा है न कि बुद्धि की ज़रूरत पड़ती है।

दादाश्री : नहीं। बुद्धि तो नफा-नुकसान दो ही दिखाती है। जहाँ जाओ वहाँ नफा-नुकसान वह दिखा देती है। वह कुछ पैसे-वैसे नहीं देती। बुद्धि यदि पैसे दे रही होती न तो ये भूलेश्वर (मुंबई का एक इलाका) में इतने सारे बुद्धिशाली मुनीम होते हैं, जो सेठ को समझ में नहीं आता वह सब उसे समझ में आ जाता है। पर चप्पल बेचारे के पीछे से आधे घिस गए होते हैं और सेठ तो साढ़े तीन सौ रुपये के बूट पहनकर घूमते हैं, फिर भी ढपोल होते हैं!

पैसा कमाने के लिए पुण्य की ज़रूरत है। बुद्धि से तो उल्टे पाप बंधते हैं। बुद्धि से पैसे कमाने जाएँ तो पाप बंधते हैं। मुझमें बुद्धि नहीं है इसलिए पाप नहीं बंधते। हममें बुद्धि एक सेन्ट परसेन्ट नहीं है!

लक्ष्मी जी किसके पीछे?

लक्ष्मीजी तो पुण्यशालियों के पीछे ही घूमती रहती है। और मेहनती लोग लक्ष्मीजी के पीछे घूमते रहते हैं। इसलिए हमें देख लेना चाहिए कि पुण्य होंगे तो लक्ष्मीजी पीछे आएँगी। नहीं तो मेहनत से तो रोटी मिलेगी, खाने-पीने का मिलेगा और एकाध बेटी होगी तो उसकी शादी होगी। बाकी, पुण्य के बिना लक्ष्मी नहीं मिलती। इसलिए

खरी हक़ीक़त क्या कहती है कि 'तू यदि पुण्यशाली है तो किसलिए छटपटाता है? और तू पुण्यशाली नहीं है तो भी छटपटाता किसलिए है?'

पुण्यशाली तो कैसे होते हैं? ये अमलदार भी ऑफिस से अकुलाकर घर वापस आते हैं, तब मेमसाहिबा क्या कहेगी, 'डेढ़ घंटा लेट हुए, कहाँ गए थे?' ये देखो पुण्यशाली! पुण्यशाली को ऐसा होता होगा? पुण्यशाली को एक उल्टा हवा का झोंका नहीं लगता। बचपन से ही वह क्वॉलिटी अलग होती है। अपमान का योग नहीं मिलता है। जहाँ जाए वहाँ 'आओ, आओ भाई' उस तरह से पले-बड़े होते हैं। और ये तो जहाँ-तहाँ टकराता रहता है। उसका अर्थ क्या है फिर? वापस पुण्य खत्म हो जाएँ न, तब थे वैसे के वैसे! इसलिए तू पुण्यशाली नहीं तो पूरी रात पट्टा बाँधकर घूमे तो भी सुबह में क्या पचास मिल जाएँगे? इसलिए छटपटाना मत, और जो मिला उसमें खा-पीकर सो जा न चुपचाप।

प्रश्नकर्ता : वह तो प्रारब्धवाद हुआ न?

दादाश्री : नहीं, प्रारब्धवाद नहीं। तू अपनी तरह से काम कर। मेहनत करके रोटी खा। बाकी, अन्य प्रकार से क्यों छटपटाता रहता है? ऐसे इकट्ठा करूँ और वैसे इकट्ठा करूँ! यदि तुझे घर में मान नहीं है, बाहर मान नहीं है तो किसलिए हाथ-पैर मारता है? और जहाँ जाए वहाँ उसे 'आओ, बैठो' कहने वाले होते हैं, ऐसे बड़े-बड़े पुण्य लाए हों, उनकी बात ही अलग होती है न?

ये सेठ पूरी ज़िंदगी के पच्चीस लाख लेकर आए होते हैं, वे पच्चीस लाख के बाइस लाख करते हैं पर बढ़ाते नहीं हैं। बढ़ते कब है? हमेशा ही धर्म में रहे तो। पर यदि खुद भीतर दखल करने गया तो बिगड़ा। कुदरत में हाथ डालने गया कि बिगड़ा। लक्ष्मी आती है पर कुछ मिलता नहीं है।

रेन्क, पुण्यशालियों की...

ये बड़े-बड़े चक्रवर्ती राजा थे, उन्हें यह दिन है या रात है,

उसकी खबर नहीं रहती थी। उन्होंने सूर्यनारायण भी नहीं देखे हों, फिर भी बड़ा राज्य सँभालते थे। क्योंकि पुण्य काम करता है।

प्रश्नकर्ता : शालिभद्र सेठ को देवी-देवता ऊपर से सोने के सिक्कों की पेटियाँ देते थे, तो क्या वह सच है?

दादाश्री : हाँ, देते हैं। सबकुछ देते हैं। उनका पुण्य हो तब तक क्या नहीं देंगे? और देवी-देवता के साथ ऋणानुबंध होता है। उनके रिश्तेदार वहाँ (देवलोक) गए हों और पुण्य हो तो उन्हें क्या नहीं देंगे?

पुण्यशालियों को कम मेहनत से सबकुछ फलता है। इतने तक पुण्य हो सकता है। सहज विचार आया, कुछ प्रयत्न नहीं करें तो भी सभी वस्तुएँ सोचे अनुसार मिल जाती हैं, वह सहज प्रयत्न। प्रयत्न निमित्त है पर सहज प्रयत्न को पुरुषार्थ कहना, वह सारी परिभाषा भूल से भरी हुई है।

लक्ष्मी अर्थात् पुण्यशाली लोगों का काम है। पुण्य का हिसाब ऐसा है कि खूब मेहनत करे और कम से कम मिलता है, वह बहुत ही थोड़ा साधारण पुण्य कहलाता है। फिर शारीरिक मेहनत बहुत नहीं करनी पड़े और वाणी की मेहनत करनी पड़े, वकीलों की तरह, वह थोड़ा अधिक पुण्य कहलाता है, मज़दूर की तुलना में और उससे आगे का क्या? वाणी की झंझट भी नहीं करनी पड़ती, शरीर की झंझट भी नहीं करनी पड़ती, पर मानसिक झंझट से कमाता है, वह अधिक पुण्यशाली कहलाता है। और उससे भी आगे कौन-सा? संकल्प करते ही तैयार हो जाए। संकल्प किया वह मेहनत। संकल्प किया कि दो बंगले, यह एक गोदाम। ऐसा संकल्प किया कि सब तैयार हो जाता है, वह महान पुण्यशाली। संकल्प करे वह मेहनत, बस संकल्प करना पड़ता है। संकल्प के बिना नहीं होता। थोड़ी भी मेहनत, कुछ तो चाहिए।

प्रश्नकर्ता : परंतु मनुष्यों में वैसा नहीं हो सकता।

दादाश्री : मनुष्यों में भी होता है। क्यों नहीं होगा? मनुष्यों में तो चाहिए उतना होगा।

प्रश्नकर्ता : वह तो ऐसा कहा हुआ है कि देवलोक में ऐसा होता है।

दादाश्री : देवलोक का सबकुछ सिद्ध होता है। पर यहाँ पर भी किसी -किसी को संकल्प सिद्धि हो जाती है। सब होता है, अपना पुण्य चाहिए। पुण्य नहीं है। पुण्य कम पड़ गए हैं।

जितनी मेहनत उतने अंतराय, क्योंकि मेहनत क्यों करनी पड़ रही है?

अर्थात् इस जगत् में सबसे अधिक पुण्यशाली कौन? जिसे थोड़ा भी विचार आए, वह निश्चित करे और वर्षों तक बिना इच्छा के, बिना मेहनत के मिलता ही रहे वह। दूसरे नंबर पर, इच्छा हो, और वह बार-बार निश्चित करे और शाम को सहज प्रकार से मिल जाए वह। तीसरे नंबर वाले को इच्छा होती है और प्रयत्न करता है और प्राप्त हो जाता है। चौथे नंबर वाले को इच्छा होती है और भयंकर प्रयत्न से प्राप्त होता है। पाँचवे को इच्छा होती है और भयंकर प्रयत्नों से भी प्राप्त नहीं होता। इन मज़दूरों को कठोर मेहनत करनी पड़ती है और ऊपर से गालियाँ खाते हैं फिर भी पैसे नहीं मिलते। मिलें तो भी ठिकाना नहीं कि घर जाकर खाने को मिलेगा। वे सबसे अधिक प्रयत्न करते हैं, फिर भी प्राप्ति नहीं होती।

पुण्य से ही प्राप्त सत्संग

आपने पुण्य किया हुआ है या नहीं? इसीलिए तो सी.ए. हुए।

प्रश्नकर्ता : अभी तक पाप नहीं किया, पुण्य ही किया है।

दादाश्री : वह तो ऐसा लगता है। पाप भी किया है पर पाप कम किया होगा, पुण्य अधिक किया होगा। इसलिए तो इस सत्संग

में आने का टाइम मिला, यहाँ आ सके, नहीं तो सत्संग में आने का टाइम किसे होता है?

पुण्य-पाप के परिणाम स्वरूप...

प्रश्नकर्ता : पाप और पुण्य से उसका संबंध किस प्रकार होता है?

दादाश्री : यह पाप है वह, अभी आप यहाँ पर आए हो तो आप यहाँ किसी को ठोकर नहीं लगे ऐसे सँभलकर चलते हो और ठोकर लगे वैसी जगह हो, जगह वैसी भीड़ वाली हो, पर मन में सोच होती है कि किसी को लगे नहीं तो अच्छा, ऐसी भावना से यहाँ आओ, तो आपको पुण्य बंधेगा।

और, भीड़ है इसलिए लग भी जाती है, वैसी भावना से आओ तब पाप बंधेगा।

किसी को अपने से किंचित् मात्र दु:ख हो जाए, तो उसे पाप ही बंधता है। किसी को सुख पहुँचे, शांति हो, किसी के दिल को ठंडक हो, उससे निरा पुण्य बंधता है।

अब वे पूर्व के बंधे हुए पाप, वे इस भव में वापस उदय में आते हैं। योजना जो पिछले जन्म में हुई थी, वह इस जन्म में फलीभूत होती है।

जब पाप का उदय आता है तब पूरा दिन मन में विचार, खराब चिंता के विचार आया करते हैं, बाहर भी नुकसान होता है, बच्चे विरोध करते हैं, पार्टनर के साथ झगड़े होते हैं, पाप का उदय हो तब। और पुण्य का उदय हो तब दुश्मन हो न, वह भी आकर कहेगा, 'अरे चंदूभाई, कोई कामकाज हो तो मुझे कहना...' अरे, तू दुश्मन, पर तब तो पुण्य का उदय आया था आपका। इसलिए पुण्य के उदय में शत्रु मित्र बन जाता है। और पाप का उदय हो, तब बेटा शत्रु बन जाता है। कोई बेटा बाप के ऊपर दावा दायर करता है क्या?

प्रश्नकर्ता : करता ही है।

दादाश्री : अरे, एक व्यक्ति ने दावा दायर किया था बाप पर, उसने क्या-क्या किया फिर? उसने दावा दायर करने के बाद वकील से ऐसा कहा, कि पिताजी हार गए तो हर्ज नहीं, वह तो अच्छा हो गया अब। लो, यह आपकी तीन सौ रुपये की फ़ीस। पर अभी एक बार चलाओ। तब कहे, 'क्यों अब क्या है?' तब उसने कहा, 'नाक कटवानी है।' अरे मुए, बाप की नाक कटवानी है? तब कहता है, 'हाँ, उसके लिए मैं डेढ़ सौ रुपये दूँगा।' तो वहाँ पर फज़ीता करवाया, नाक कटवाई। यानी जब अपनी भूल हो और पाप (का उदय) हो तब, बेटा भी दुश्मन हो जाता है।

परम मित्र कौन?

पुण्य अच्छा हो तो सबकुछ अच्छा है। इसलिए पुण्यरूपी मित्र हो तो जहाँ जाओ वहाँ सुख, सुख और सुख। वह मित्र होना चाहिए। पाप रूपी मित्र आया कि दुःख दिए बिना रहेगा नहीं। फिर समभाव से निकाल नहीं होता, तब चिल्लाना पड़ता है।

प्रश्नकर्ता : वह जो आपने कहा है कि पुण्य चाहे जहाँ मित्र की तरह काम करता है...

दादाश्री : हाँ, खराब से खराब जगह पर आपको, किसी भी जगह पर जहाँ फँस जाओ, वहाँ आपका पुण्य कार्यान्वित होकर खड़ा रहता है।

प्रश्नकर्ता : पाप घर में भी दुःखी करता है।

दादाश्री : पाप घर में बिस्तर में मार डालता है। बिस्तर में चिंता करवाता है, फर्स्ट क्लास बिस्तर बिछाया, उस पर भी चिंता करवाता है। पाप छोड़ता नहीं न! इसलिए ही संतों ने कहा हुआ है, पाप से डरो।

कैसा पुण्य चाहिए मोक्ष के लिए?

प्रश्नकर्ता : जब तक मोक्ष के मार्ग पर नहीं पहुँचे, तब तक पुण्य नाम के गाइड की ज़रूरत पड़ती है न?

दादाश्री : हाँ, उस पुण्य के गाइड के लिए तो लोग शुभाशुभ में पड़े हैं न! उस गाइड से सभी मिलेगा। पर मोक्ष के मार्ग में जाते हुए पुण्य बंधता है, पर ऐसे पुण्य की ज़रूरत नहीं है। मोक्ष में जाने वालों का पुण्य तो कैसा होता है? उसे जगत् में सूर्यनारायण उगे या नहीं, वह भी पता नहीं चलता और पूरी ज़िंदगी बीत जाती है, वैसे पुण्य होते हैं। तो फिर ऐसे कचरे जैसे पुण्य का क्या करना है?

नहीं हो सकता माइनस पाप का कभी

प्रश्नकर्ता : यह मार्ग नहीं मिले, तब तक तो उस पुण्य की ज़रूरत है न?

दादाश्री : हाँ, वह ठीक है। पर लोगों के पास पुण्य कहाँ साबुत है? कुछ भी ठिकाना नहीं है। क्योंकि आपकी क्या इच्छा है? तब कहे कि पुण्य करो तो पाप का उदय नहीं आएगा। जबकि भगवान क्या कहते हैं? तूने सौ रुपये का पुण्य बाँधा तो तेरे खाते में सौ रुपये जमा हो जाते हैं। उसके बाद दो रुपये जितना पाप किया यानी कि किसी मनुष्य को 'हट, हट, दूर खिसक' ऐसा कहा, उसमें थोड़ा तिरस्कार आ गया। अब उसका जमा-उधार नहीं होता। भगवान कोई कच्ची माया नहीं है। यदि पुण्य-पाप का जमा-उधार होता तब तो इस वणिक जाति के वहाँ थोड़ा भी दु:ख नहीं होता! पर ये तो सुख भी भोगो और दु:ख भी भोगो, भगवान कैसे पक्के!

प्रश्नकर्ता : यदि मनुष्य पुण्य के रास्ते पर जाए तो फिर पाप क्यों आता है?

दादाश्री : वह तो हमेशा से नियम ऐसा ही है न कि अगर आप कोई भी कार्य करते हो, तो अगर वह पुण्य का कार्य हो तो

आपके सौ रुपये जमा होते हैं और पाप का कार्य हो तो भले ही थोड़ा सा, एक ही रुपये का हो, फिर भी वह आपके खाते में उधार हो जाता है लेकिन उस सौ में से एक भी कम नहीं होता। ऐसे यदि कम हो जाता तो कोई पाप लगता ही नहीं। अत: दोनों अलग-अलग रहते हैं और दोनों के फल भी अलग-अलग आते हैं। जब पाप का फल आए तब कड़वा लगता है।

पुण्य में से पाप इस तरह नहीं घटते हैं। यदि घट जाते तब तो लोग तो बहुत ही पक्के। बिल्कुल भी दु:ख नहीं आता। एक भी बेटा मरता नहीं या बेटी मरती नहीं। नौकर चोरी नहीं करते। कुछ भी नहीं करते। मज़े होते। यह तो पुण्य घेर लें तो मोटरों में मौज-मज़ा भी करवाते हैं और पाप घेर लें तब उसी मोटर से एक्सिडेन्ट करवाता है। यह तो सब घेर लेगा। भीतर होगा उतना सामान घेर लेगा। नहीं होगा तो कहाँ से घेरेगा? जो है वह हिसाब है। उसमें कुछ भी बदलाव नहीं होगा।

अनजाने में हुए पापों का?

प्रश्नकर्ता : लेकिन मैंने पाप किया या पुण्य किया वैसा ज्ञान नहीं हो, फिर भी पाप-पुण्य बंधेंगे? उसे ज्ञान ही नहीं है कि यह मैंने पाप किया और यह पुण्य किया, तो उस पर इसका बिल्कुल भी असर होगा ही नहीं न?

दादाश्री : कुदरत का नियम ऐसा है कि आपको ज्ञान हो या नहीं हो, फिर भी उसका असर हुए बगैर तो रहता ही नहीं है। यदि इस पेड़ को काटा और आप इसमें कोई पाप या पुण्य नहीं समझते हो, लेकिन फिर भी पेड़ को दु:ख तो हुआ ही न? इसलिए आपको पाप लगा। आप चार घंटे लाइन में खड़े रहकर राशन में से कंट्रोल की चीनी की थैली लेकर जा रहे हों और थैली में छेद हो और उसमें से चीनी बिखर रही हो, तो वह चीनी किसी के काम आएगी या नहीं आएगी? नीचे चींटियाँ होती हैं, वे चीनी ले जाती हैं। अब इसे ऐसा

कहा जाएगा कि आपने दान किया। भले ही बिना समझे, लेकिन दान हो रहा है न? आपकी जानकारी में नहीं है, फिर भी दान होता रहता है न? और चींटियों को सुख होता है न? उससे आपको पुण्य बंधता है।

कितने ही कहते हैं कि अनजाने में पाप हो जाए तो उसका फल कुछ नहीं आता। नहीं क्यों आएगा? मुए, अनजाने में अंगारों पर हाथ रख तो पता चलेगा कि फल आता है या नहीं। जान-बूझकर किया हुआ पाप और अनजाने में किया हुआ पाप, वे दोनों एक सरीखे हैं। परंतु अनजाने में किए हुए पाप का फल अनजाने में और जान-बूझकर किए हुए पाप का फल जान-बूझकर भोगना पड़ता है, उतना फर्क है। बस यही तरीका है। यह नियमानुसार है सारा, यह जगत् बिल्कुल नियमानुसार है, न्यायस्वरूप है।

अनजाने में जो होता है, उसका फल अनजाने में मिलता है। वह आपको समझाता हूँ।

एक मनुष्य सात वर्ष तक राज्य करता है और दूसरा एक मनुष्य भी सात वर्ष तक राज्य करता है। अब दोनों का राज्य करना एक सरीखा ही है और राज्य भी दोनों एक सरीखे ही हैं, पर इसमें एक मनुष्य तीन वर्ष की उम्र में गद्दी पर बैठता है और दस वर्ष की उम्र में राज्य चला जाता है और दूसरा मनुष्य बीस वर्ष की उम्र में गद्दी पर बैठता है, वह सत्ताईस वर्ष की उम्र में गद्दी से उठ जाता है तो किसने सच में राज्य भोगा कहा जाएगा? पहले वाले का बचपन में चला गया, उसे खिलौने दो तो वह खिलौना खेलने बैठ जाएगा!

इसलिए यह नासमझी में किए हुए पुण्य का फल है। ये दर्शन किए थे बिना समझे, तो वह बिना समझे ही फल भोगेगा। समझकर किए हुए का फल समझ से भोगता है!

उसी प्रकार जागृत माइन्ड से किए गए पाप जागृतिपूर्वक भोगने पड़ते हैं और अजागृतिपूर्वक किए गए पाप अजागृतिपूर्वक भोगने पड़ते

हैं। उसमें बचपन में तीन वर्ष की उम्र में माँ मर जाए तो रोता-करता नहीं है। उसे पता भी नहीं होता। समझता ही नहीं, वहाँ पर क्या करे? और पच्चीस वर्ष का हो और उसकी माँ मर जाए तो? यानी यह जानते हुए दुःख भोगता है और बच्चा अनजाने में भुगतता है।

कसूर सेठ का या अपने पापों का?

सेठ इनाम देते हैं, वह अपना व्यवस्थित है और अपना व्यवस्थित उल्टा आए तब सेठ के मन में होता है कि इस बार इसकी तनख़्वाह काट लेनी चाहिए। जब सेठ तनख़्वाह काट ले तो नौकर के मन में ऐसा होता है कि यह सेठ नालायक है। यह नालायक मुझे मिला। पर ऐसा गुणाकार करने वाले व्यक्ति को मालूम नहीं है कि यह नालायक होता तो इनाम किसलिए देता था? इसलिए कोई भूल है। सेठ टेढ़ा नहीं है। यह तो अपना 'व्यवस्थित' बदल रहा है।

यह सब पुण्य चलाता है। तुझे हज़ार रुपये तनख़्वाह कौन देता है? तनख़्वाह देने वाला तेरा सेठ भी पुण्य के अधीन है। पाप घेर लें तो सेठ को भी कर्मचारी मारते हैं।

जागृति, पुण्य और पाप के उदय में...

प्रश्नकर्ता : लोगों का पुण्य होगा इसलिए यह संपत्ति प्राप्त हुई।

दादाश्री : वह सब पुण्य है न, जबरदस्त पुण्य है न, पर संपत्ति को सँभालना मुश्किल हो जाता है।

प्रश्नकर्ता : इसलिए वह ठीक है। *उपाधि* तो है ही न? शुरूआत फिर वहाँ से ही होती है।

दादाश्री : संपत्ति नहीं हो उसके जैसा तो कुछ भी नहीं।

प्रश्नकर्ता : पैसे नहीं हो, संपत्ति नहीं हो, तो उसके जैसा कुछ भी नहीं?

दादाश्री : हाँ, उसके जैसा तो कुछ भी नहीं। संपत्ति तो *उपाधि* है। संपत्ति यदि इस तरफ धर्म में मुड़ ही गई हो तो हर्ज नहीं है, नहीं तो *उपाधि* हो जाती है। किसे दें? अब कहाँ रखें? वह सब *उपाधि* हो जाती है!

इसलिए बहुत पुण्य भी काम का नहीं है। पुण्य भी संतुलित हो तो ही अच्छा। बहुत पुण्य हो तो शरीर इतना बड़ा हो जाता है। क्या करना है उसे? कितने किलो का शरीर? हम उठाएँ और पलंग को भी उठाना पड़े न? पलंग भी चूँ-चूँ करता रहे न?

प्रश्नकर्ता : पाप और पुण्य का उदय हो, उसका जीवन की घटनाओं पर कुछ असर होता है, उसका कोई उदाहरण देकर समझाइए।

दादाश्री : पाप का उदय हो, तब पहले तो जॉब (नौकरी) चली जाती है। फिर क्या होता है? वाइफ और बेटा हो, वहाँ स्टोर में जाने के लिए पैसे माँगते हैं। वह आदत पहले की पड़ी हुई है, उस अनुसार कहेंगे, दो सौ डॉलर दीजिए, इसलिए कलह होता है फिर। यहाँ सर्विस नहीं और क्या शोर मचाती रहती है बिना काम के? दो सौ-दो सौ डॉलर का खर्चा करना है? यह ऐसे शुरू होता है, सब आराम से। वह भी रोज़ कलह, फिर पत्नी कहेगी, बैंक में से लाकर नहीं देते हो। तब बैंक में थोड़ा रहने दें या नहीं रहने दें? यहाँ इसका किराया देना पड़ेगा। यह सब नहीं करना पड़ेगा? बैंक में पैसे नहीं भरने पड़ेंगे? परंतु पत्नी कलह करती है, तो दिमाग़ पक जाए वैसी कलह करती है। ये सभी लक्षण तो रात को सोने भी नहीं देते, यहाँ अमरीका में कितनों को ऐसा अनुभव होता होगा और कहते भी हैं कर्कशा है। रांड और कर्कशा है, ऐसे शब्द बोलते हैं। यानी जितने शब्द आएँ उतने कठोर शब्द बोलता है। छोड़ता नहीं न? उसे परेशान करती रहती है, बेचारे उसकी इस बार नौकरी चली गई, एक तो ठिकाना नहीं पड़ता और दिमाग़ उल्टा ही चल रहा होता है, उसमें फिर यह परेशान करती है। होता है या नहीं होता ऐसा?

प्रश्नकर्ता : होता है, होता है।

दादाश्री : किसी जगह पर होता होगा या बहुत जगहों पर? जॉब चली गई हो, वे मुझे मिलते हैं, 'दादा जॉब चली गई है, क्या करूँ?' कहेगा।

वह जॉब चली गई हो और दिन बहुत अच्छी तरह से निकाले, वह विवेकी मनुष्य कहलाता है। पत्नी और खुद दोनों अच्छी तरह दिन गुज़ारें वह विवेकी। नये कपड़े नहीं लाते और पहले के कपड़े हों न, वही पहनते हैं। जब तक नौकरी नहीं मिले न, तब तक उतना टाइम निकाल लेते हैं। और पतियों को उत्साही रहना चाहिए, जॉब चली जाए उससे डरना नहीं चाहिए। यह इतना घास काटकर या ऐसा-वैसा करके, शाम को दस-बीस डॉलर ले आए, बहुत हुआ, कमी तो नहीं पड़ेगी। तब कहे, नहीं, हमें तो ये लोग देख लेंगे तो क्या कहेंगे? अरे मूर्ख, लोगों के पास तो जॉब है, तेरे पास जॉब नहीं है, तू पहले इसकी फिक्र करना। किसी की आबरू इस दुनिया में रही नहीं है। सभी ने कपड़े पहन लिए हैं, इसलिए आबरूदार दिखते हैं और कपड़े निकाल दें तो सब नंगे दिखेंगे। सिर्फ ज्ञानी पुरुष अकेले कपड़े उतार दें, तो भी नंगे नहीं दिखेंगे। बाकी यह पूरा जगत् नंगा है।

प्रश्नकर्ता : एक तरफ जॉब गई हो और दूसरी तरफ दादा मिले हों, तो वह पाप और पुण्य दोनों इकट्ठे हो गए?

दादाश्री : यह पाप का उदय अच्छा आया कि दादा मिल गए, इसलिए दादा हमें पाप में क्या करना चाहिए, वह बता देते हैं और हमारा सब ठिकाने पर ला देते हैं। और पुण्य का उदय हो और दादा मिले हों, तो उसमें क्या दादा के पास से जानने को मिला हमें? लेकिन पाप का उदय हो तब दादा कहेंगे कि देख भाई, इस तरह बरतना हं, अब ऐसा करो, वैसा करो और सब ठिकाने पर ला देते हैं। अर्थात् पाप का उदय हो और दादा मिल जाएँ, वह बहुत अच्छा कहलाता है।

रहस्य, बुद्धि के आशय के...

हर एक व्यक्ति को खुद के घर में आनंद आता है। झोंपड़ी

वाले को बंगले में आनंद नहीं आता और बंगले वाले को झोंपड़ी में आनंद नहीं आता। उसका कारण उसकी बुद्धि का आशय है। जो जैसा बुद्धि के आशय में भरकर लाया होता है, वैसा ही उसे मिलता है। बुद्धि के आशय में जो भरा हुआ होता है, उसकी दो फोटो खिंचती है, (1) पापफल और (2) पुण्यफल। बुद्धि के आशय का हर एक ने विभाजन किया है। उस सौ प्रतिशत में से अधिकतर प्रतिशत मोटर-बंगला, बेटे-बेटियाँ और पत्नी, उन सबके लिए भरा है। तो वह सब प्राप्त करने में पुण्य खर्च हो गया और धर्म के लिए मुश्किल से एक-दो प्रतिशत ही बुद्धि के आशय में भरे।

प्रश्नकर्ता : बुद्धि का आशय ज़रा विशेष रूप से समझाइए न, दादा।

दादाश्री : बुद्धि का आशय मतलब 'हमें बस चोरी करके ही चलाना है। काला बाज़ार करके ही चलाना है।' कोई कहेगा, 'हमें चोरी कभी भी नहीं करनी है।' कोई कहेगा, 'मुझे ऐसा भोग लेना है, वह वैसा भोग लेने के लिए एकांत की जगह भी तैयार कर देता है। उसमें फिर पाप-पुण्य काम करता है। जो कुछ भोगने की इच्छा की होती है, वैसा सब उसे मिल आता है। मानने में नहीं आए वैसा सब भी उसे मिल जाता है। क्योंकि उसकी बुद्धि के आशय में था और पुण्य काम करे तो कोई उसे पकड़ भी नहीं सकता, चाहे जितने पहरे लगाए हों तो भी! और पुण्य पूरा हो जाए, तब यों ही पकड़ा जाता है। छोटा बच्चा भी उसे ढूंढ निकालता है कि, 'ऐसा घोटाला है इधर!'

दो चोर चोरी करते हैं, उसमें से एक पकड़ा जाता है और दूसरा आज़ाद छूट जाता है, वह क्या सूचित करता है? चोरी करनी है वैसा, बुद्धि के आशय में तो दोनों ही चोरी लाए थे। पर उनमें जो पकड़ा गया, उसका पापफल उदय में आया और उदय में आकर खर्च हो गया। जबकि दूसरा जो छूट गया, उसका पुण्य उसमें खर्च हो गया। वैसे ही हर एक के बुद्धि के आशय में जो होता है, उसमें पाप और पुण्य कार्य करते हैं। बुद्धि के आशय में लक्ष्मी प्राप्त करनी है

वैसा भरकर लाया, उसमें उसका पुण्य काम में आए तो लक्ष्मी का ढेर लग जाता है। दूसरा बुद्धि के आशय में लक्ष्मी प्राप्त करनी है वैसा लेकर तो आया, पर उसमें पुण्य काम आने के बदले पापफल सामने आया। उसे लक्ष्मीजी मुँह भी नहीं दिखाती। अरे, यह तो इतना अधिक स्पष्ट हिसाब है कि किसी का ज़रा भी चले वैसा नहीं है। जबकि ये अक्कर्मी मान लेते हैं कि मैं दस लाख रुपये कमाया। अरे, यह तो पुण्य खर्च हुआ और वह भी उल्टे रास्ते। उसके बदले तेरा बुद्धि का आशय बदल। धर्म के लिए ही बुद्धि का आशय बाँधने जैसा है। ये जड़ वस्तुएँ मोटर, बंगले, रेडियो उन सभी की भजना की, सिर्फ उसके लिए ही बुद्धि का आशय बाँधने जैसा नहीं है। धर्म के लिए ही - आत्मधर्म के लिए ही बुद्धि का आशय रखो। अभी आपको जो प्राप्त है वह भले हो, पर अब तो मात्र आशय बदलकर संपूर्ण सौ प्रतिशत धर्म के लिए ही रखो।

हम अपने बुद्धि के आशय में पंचानबे प्रतिशत धर्म और जगत् कल्याण की भावना लाए हैं। अन्य किसी जगह हमारा पुण्य खर्च हुआ ही नहीं है। पैसे, मोटर, बंगला, बेटा, बेटी कहीं भी नहीं।

हमें जो-जो मिले और ज्ञान लेकर गए, उन्होंने दो-पाँच प्रतिशत धर्म के लिए, मुक्ति के लिए रखे थे। इसलिए हम मिले। हमने पूरे सौ प्रतिशत धर्म में डाले थे, इसलिए हमें सभी ओर से धर्म के लिए 'नो ऑब्जेक्शन सर्टिफिकेट' मिला है।

अनंत जन्मों से मोक्ष का *नियाणां* (अपना सारा पुण्य लगाकर किसी एक वस्तु की कामना करना) किया है, परंतु पूरा पक्का *नियाणां* नहीं किया है। यदि मोक्ष के लिए ही पक्का *नियाणां* किया हो तो सभी पुण्य उसमें ही खर्च हो। आत्मा के लिए जीएँ वह पुण्य है और संसार के लिए जीएँ तो निरा पाप है।

पसंद, पुण्य के बटवारे की...

इसलिए यह पुण्य है न, वह हम जैसी माँग करें न उसमें बंट

जाता है। कोई कहेगा, मुझे इतनी शराब चाहिए, ऐसा चाहिए, वैसा चाहिए। तो उसमें बंट जाता है। कोई कहेगा, मुझे मोटर चाहिए, और घर। तब कहे, दो रूम होंगे तो चलेगा। दो रूम का उसे संतोष होता है और मोटर चलाने को मिलती है।

इन लोगों को संतोष रहता होगा, छोटी–छोटी झोंपड़ियों में रहते हैं उन सभी को? खरा संतोष। इसलिए तो उन्हें वह घर पसंद आता है। वैसा हो तभी अच्छा लगता है। अभी उस आदिवासी को अपने यहाँ पर लाकर देखो। चार दिन रखकर देखो? उसे चैन नहीं पड़ेगा इसमें। क्योंकि उसका बुद्धि का आशय है और उसके अनुसार पुण्य का डिविज़न होता है। टेन्डर के अनुसार आइटम मिलता है।

प्रश्नकर्ता : पुण्य–पाप के ही अधीन हो तो फिर टेन्डर भरने को कहाँ रहा?

दादाश्री : यह टेन्डर भरा जाता है, वह पाप–पुण्य के उदय के अनुसार ही भरा जाता है। इसलिए मैं कहता ज़रूर हूँ कि 'टेन्डर' भरो, पर मैं जानता हूँ कि किस आधार पर टेन्डर भरा जाता है। इन दोनों कानून के बाहर चल सके वैसा नहीं है।

मैं बहुत लोगों को मेरे पास 'टेन्डर' भरकर लाने को कहता हूँ। पर कोई भरकर नहीं लाया है। किस तरह भरें? वह पाप–पुण्य के अधीन है। इसलिए पाप का उदय हो तब बहुत भाग–दौड़ करेगा तो जो है वह भी चला जाएगा। इसलिए घर जाकर सो जा और थोड़ा–थोड़ा साधारण काम कर, और पुण्य का उदय हो तो भटकने की ज़रूरत ही क्या है? घर बैठे आमने–सामने थोड़ा–सा काम करने से सब आ मिलता है, इसलिए दोनों ही स्थितियों में भाग–दौड़ करने को मना करते हैं।

बात को सिर्फ समझने की ही ज़रूरत है।

पुण्य के खेल के सामने मिथ्या प्रयत्न क्यों?

पुण्य फल देने के लिए सम्मुख हुआ है, तो किसलिए मिथ्या

प्रयत्न में लगा है? और यदि पुण्य फल देने के लिए सम्मुख नहीं हुआ तो दखल किसलिए करता है बिना काम के? सम्मुख नहीं हुआ और तू दखल करेगा तो भी कुछ होने वाला नहीं है। और सम्मुख हुआ हो तो दखल किसलिए करता है तू? पुण्य जब फल देने को तैयार होगा तो देर ही नहीं लगेगी।

पाप-पुण्य की लिंक...

कोई बाहर का व्यक्ति मेरे पास व्यवहार से सलाह लेने आए कि, 'मैं चाहे जितना सिरफोड़ी करता हूँ तो भी कुछ होता नहीं है।' तब मैं कहता हूँ, 'अभी तेरा उदय पाप का है। तू किसी के वहाँ से रुपये उधार लेकर आएगा तो रास्ते में तेरी जेब कट जाएगी! इसलिए अभी आराम से घर बैठकर, तू जो शास्त्र पढ़ता हो वह पढ़ और भगवान का नाम लेता रह।'

हम 1968 में जयगढ़ की जेटी बना रहे थे। वहाँ एक कान्ट्रैक्टर मेरे पास आया। वह मुझसे पूछने लगा, 'मैं मेरे गुरु महाराज के पास जाता हूँ। हर साल मेरे पैसे बढ़ते ही रहते हैं। मेरी इच्छा नहीं, फिर भी बढ़ते हैं, तो क्या वह गुरु की कृपा है?' मैंने उसे कहा, 'वह गुरु की कृपा है, वैसा मानना मत। यदि पैसे चले जाएँगे तो तुझे ऐसा होगा कि लाओ, गुरु को पत्थर मारूँ!'

इसमें गुरु तो निमित्त हैं, उनके आशीष निमित्त हैं। गुरु को ही चाहिए हों तो चार आने नहीं मिलें न! इसलिए फिर उसने मुझसे पूछा कि, 'मुझे क्या करना चाहिए?' मैंने कहा, 'दादा का नाम लेना।' अभी तक तेरी पुण्य की लिंक आई थी। लिंक मतलब अंधेरे में पत्ता उठाए तो चोग़ा आए, फिर पंजा आए, फिर वापस उठाए तो छक्का आए। तो लोग कहें कि, 'वाह सेठ, वाह सेठ, कहना पड़ेगा।' वैसा तुझे एक सौ सात बार तक सच्चा पड़ता है। पर अब बदलने वाला है। इसीलिए सावधान रहना। अब तू निकालेगा तो सत्तावन के बाद तीन आएगा और तीन के बाद एक सौ ग्यारह आएगा! तब लोग तुम्हें बुद्धू कहेंगे। इसलिए इन दादा का नाम छोड़ना नहीं। नहीं तो मारा जाएगा।

फिर हम मुंबई आ गए। वह आदमी दो–चार दिन बाद यह बात भूल गया। उसे फिर बहुत भारी नुकसान हुआ। इसलिए उन पति–पत्नी दोनों ने खटमल मारने की दवाई पी ली! पर पुण्यशाली इतना कि उसका भाई ही डॉक्टर था। वह आया और बच गया! फिर वह मोटर लेकर दौड़ता हुआ मेरे पास आया। मैंने उसे कहा, 'इन दादा का नाम लेते रहना और फिर ऐसा कभी भी मत करना।' तब फिर वह नाम लेता रहा। उसके पाप सब धुल गए और सब ठीक हो गया।

'दादा' बोलें उस घड़ी पाप पास में आते ही नहीं। चारों तरफ फिरते रहते हैं पर छूते नहीं आपको। आप झोंका खाते हों, तो उस घड़ी छू जाते हैं। रात को नींद में नहीं छूते। यदि जब तक जग रहे हैं तब तक बोलते रहे और सुबह में उठते ही बोले हों, तो बीच का समय उस स्वरूप कहलाता है।

धर्म का पुण्य तो ऐसा है, धर्म हर एक जगह पर मदद करता है। चाहे जैसी मुश्किल में मदद करता है। वैसा धर्म का पुण्य होता है। पुण्य हेल्प करता ही है। अपना ज्ञान तो अलग ही प्रकार का है। प्रत्यक्ष हाज़िर (हाजराहजूर) ज्ञान है!

पुण्य भी फाइल है और पाप भी फाइल है। पुण्य प्रमाद करवाता है और पाप जागृत रखता है। पुण्य तो उल्टे यह आइस्क्रीम खाओ, यह फ्रूट खाओ, वैसे सब प्रमाद करवाते हैं। उसके बदले यह कड़वी दवाई पिला दो न, तो जागृत तो रहे!

ग्राहक भेजने वाला कौन?

ये सब लोग मोटल चलाते हैं, उसमें मोटल में है तो आने वाले को कौन भेजता होगा? आप मोटल चलाते हो न, कौन भेजता होगा?

प्रश्नकर्ता : मालूम नहीं।

दादाश्री : वही आपका पुण्य है। भगवान नहीं भेजता है, दूसरा कोई नहीं भेजता है। आपका पुण्य भेजता है और पाप का उदय हो

तो सबकी मोटल भरी हुई हों पर आपकी नहीं भरती। अच्छे से अच्छी बनाई हो, फिर भी नहीं भरती।

किसी को दोष कैसे दिया जा सकता है?

कोई चीज़ ऐसी नहीं कि जो इन पुण्यशालियों को नहीं मिले, लेकिन ऐसा पूरा पुण्य नहीं लाए हैं इसलिए। नहीं तो हर एक चीज़, जैसी चाहिए वैसी मिले, ऐसा है, लेकिन जब तक लोग लौकिक ज्ञान में पड़े हुए हैं, तब तक कभी भी कोई चीज़ प्राप्त नहीं हो पाएगी। एक तो दिमाग़ से ज़रा गरम होता है, उसमें फिर उसे यदि ऐसा ज्ञान मिले कि *'बूधे नार पांसरी।'* तब फिर उसे जो चाहिए था, वही मिल गया! ऐसा ज्ञान मिले तो वह ज्ञान उसे फल देगा या नहीं देगा? फिर क्या होगा? जिस स्त्री के कोख से तीर्थंकर जन्मे, उस स्त्री की दशा तो देखो तुमने कैसी की? कितना अन्याय है? क्योंकि जिस स्त्री जाति की कोख से चौबीस तीर्थंकर जन्मे, बारह चक्रवर्तियों जन्मे, वासुदेव जन्मे, वहाँ पर भी ऐसा किया? भले ही आपको कड़वा अनुभव हुआ लेकिन उसके लिए स्त्री जाति को क्यों भला-बुरा कहना? आप बारह रुपये डज़न के आम लाओ लेकिन वे खट्टे निकलते हैं और तीन रुपये डज़न वाले आम बहुत मीठे निकलते हैं। यानी कई बार चीज़ उसकी क़ीमत पर आधारित नहीं होती, आपके पुण्य पर आधारित होती हैं। आपका पुण्य यदि ज़ोर लगाए न, तो आम बहुत मीठा निकलेगा! और यह जो खट्टा निकला, उसमें आपके पुण्य ने ज़ोर नहीं लगाया, उसमें किसी को दोष कैसे दिया जा सकता है?

यानी यह तो पुण्य की कमी है, और क्या है यह? बड़ा भाई जायदाद नहीं दे रहा हो तो क्या वह बड़े भाई का दोष है? अपने पुण्य में कमी है, उसमें दोष किसी का भी नहीं है। यह तो, वह पुण्य को तो सुधारता नहीं और बड़े भाई के साथ निरे पाप बाँधता है! फिर पाप के दोने इकट्ठे होते हैं।

हमें मकान की अड़चन हो और कोई मनुष्य मदद करे और

मकान रहने के लिए दे दें, तो जगत् के मनुष्य को उसके ऊपर राग हो जाता है और वह जब मकान लेना चाहे तो उस पर द्वेष होता है। यह राग-द्वेष है, अब वास्तव में तो राग-द्वेष करने की ज़रूरत नहीं है, वह निमित्त ही है। वह देने वाला और ले लेने वाला, दोनों निमित्त हैं। आपके पुण्य का उदय हो तब वह देने के लिए मिलता है, पाप का उदय हो तब लेने के लिए मिलता है। उसमें उसका कोई दोष नहीं है। आपके उदय पर आधारित है। सामने वाले का किंचित् मात्र दोष नहीं है। वह निमित्त मात्र है। वैसा अपना ज्ञान कहता है, कैसी सुंदर बात करता है!

अज्ञानी को तो कोई मीठा-मीठा बोले वहाँ पर राग होता है और कड़वा बोले वहाँ द्वेष होता है। सामने वाला मीठा बोले, वह खुद का पुण्य प्रकाशित है और सामने वाला कड़वा बोले, तो वह खुद का पाप प्रकाशित है। इसलिए मूल बात में, दोनों में सामने वाले का कुछ लेना-देना नहीं है। बोलने वाले को कोई लेना-देना नहीं है। सामने वाला मनुष्य तो निमित्त ही है। जो यश का निमित्त होता है उससे यश मिला करता है और अपयश का निमित्त होता है उससे अपयश मिला करता है। वह तो निमित्त ही है मात्र। उसमें किसी का दोष नहीं है।

प्रश्नकर्ता : सभी निमित्त ही माने जाएँगे न?

दादाश्री : निमित्त के सिवाय इस जगत् में कोई दूसरी चीज़ है ही नहीं। जो है, वह यह निमित्त ही है।

उसका आधार है पुण्य और पाप पर

प्रश्नकर्ता : कितने ही झूठ बोलें तो भी सत्य में खप जाता है और कितने ही सच बोलें तो भी झूठ में खपता है। यह पज़ल (पहेली) क्या है?!

दादाश्री : वह उनके पाप और पुण्य के आधार पर होता है। उनके पाप का उदय हो तो वे सच बोलते हैं तो भी झूठ में चला

जाता है। जब पुण्य का उदय हो तब झूठ बोले तो भी लोग उसे सच स्वीकारते हैं, चाहे जैसा झूठा करे तो भी चल जाता है।

प्रश्नकर्ता : तो उसे कोई नुकसान नहीं होता?

दादाश्री : नुकसान तो है, पर अगले भव का। इस भव में तो उसे पिछले जन्म का फल मिला। और यह झूठ बोला न, उसका फल उसे अगले भव में मिलेगा। अभी यह उसने बीज बोया। बाकी, यह कोई अंधेर नगरी नहीं है कि चाहे जैसा चल जाएगा!

उस कपल (दंपति) में कौन पुण्यशाली?

एक भाई मेरे पास आए थे। उन्होंने मुझे कहा, 'दादा, मैंने शादी तो की है पर मुझे मेरी पत्नी पसंद नहीं है।' तब मैंने कहा, 'क्यों भाई, नहीं पसंद होने का कारण क्या है?' तब उन्होंने कहा, 'वह ज़रा लंगड़ी है, पैर से लंगड़ाती है।' फिर मैंने पूछा, 'तो तेरी पत्नी को तू पसंद है या नहीं?' तब वह कहता है, 'दादा, मैं तो पसंद आऊँ वैसा ही हूँ न! सुंदर हूँ, पढ़ा-लिखा हूँ, कोई शारीरिक खामी नहीं है मुझमें।' तब मैंने कहा, 'तो उसमें भूल तेरी ही है। तूने ऐसी तो कैसी भूल की थी कि तुझे लंगड़ी मिली और उसने कितने अच्छे पुण्य किए थे कि तू इतना अच्छा उसे मिला! अरे, यह तो खुद के किए हुए कर्म ही खुद के सामने आते हैं। उसमें सामने वाले का दोष क्या देखता है? जा तेरी भूल को भुगत ले और फिर नई भूल मत करना।'

दर्द में पुण्य-पाप का रोल...

प्रश्नकर्ता : मनुष्य को रोग होते हैं, उसका क्या कारण है?

दादाश्री : वह उसने खुद ने गुनाह किए हैं सारे, पाप किए हैं, उससे ये रोग होते हैं।

प्रश्नकर्ता : पर इन छोटे-छोटे बच्चों ने कौन सा गुनाह किया था?

दादाश्री : सभी ने पाप किए थे, उसके ये रोग हैं सारे। पूर्वभव

में जो पाप किए हुए हैं, उनका फल आया इस समय। छोटे बच्चे दु:ख भुगतते हैं, वह सब पाप का फल और शांति और आनंद भुगतते हैं वह पुण्य का फल। पाप और पुण्य के फल, दोनों मिलते हैं। पुण्य है, वह क्रेडिट है और पाप डेबिट है।

प्रश्नकर्ता : हमें अभी इस भव में कोई दर्द हो, रोग हो जाए तो वह अपने पिछले भव के कर्म का फल है, तो फिर हम अभी कोई भी इलाज करें, तो वह हमें किस तरह सुधारता है, यदि वह व्यवस्थित ही है तो फिर?

दादाश्री : वह दवाई लेते हो, वह भी व्यवस्थित हो तभी ली जाती है, नहीं तो ली ही नहीं जाती। हमें मिले ही नहीं।

प्रश्नकर्ता : और कितने प्रकार की दवाईयाँ लें, तो भी उसे दवाई असर नहीं करती, ठीक नहीं होता उनसे। ऐसा भी होता है न, दादा।

दादाश्री : उल्टे पैसे खत्म हो जाते हैं और मरने का समय आ जाता है। जबकि पुण्य प्रकाशित हो तब थोड़ा ऐसे ही बातों-बातों में टमाटर का रस पीए तो भी रोग मिट जाता है। इसीलिए पुण्य पर आधारित है। आपका पुण्य फल देने के लिए तैयार हो जाए तो सब ऐसे ही फ्री ऑफ कॉस्ट मिल जाता है और पाप फल देने के लिए तैयार हो जाए तो अच्छी वस्तु हो, वह भी उल्टी पड़ जाती है।

बीमारी में पुण्य से भुगतना कम हो जाता है। बीमारी में पाप से भुगतना बढ़ जाता है। पुण्य नहीं हो तो पूरा ही भुगतना पड़ता है।

अब पुण्य हो तो वैद्यराज अच्छे मिल जाते हैं। टाइम आ मिलता है। सब मिल जाता है और शांति रहती है। दर्द डॉक्टर ने मिटाया? पुण्य ने मिटा दिया और पाप से खड़ा हुआ था। तब दूसरा कौन मिटाएगा? डॉक्टर निमित्त है!

प्रश्नकर्ता : रोग होना वह पाप का उदय कहलाएगा?

दादाश्री : तब और क्या है वह? यह रोग तो पाप है और निरोगता वह पुण्य है।

आयुष्य लंबा अच्छा या छोटा?

प्रश्नकर्ता : बहुत लम्बी आयु, बहुत लंबा आयुष्य वह पुण्य का फल है या पाप का फल है?

दादाश्री : हाँ, लोगों को गालियाँ सुनाने और लोगों की निंदा करने के लिए यदि जीवन हो तो पाप का फल है! खुद के आत्मा का भले के लिए या दूसरों के भले के लिए कोई अधिक जीता है, तो वह पुण्य का फल है।

पुण्यशाली का आयुष्य लंबा होता है, ज़रा कम पुण्य हो तो आयुष्य टूट जाता है, बीच रास्ते में! अब कोई मनुष्य बहुत पापी हो, और आयुष्य लंबा हो तो? उसे भगवान ने क्या कहा है कि पापी का आयुष्य कैसा होना चाहिए? हम भगवान से पूछें कि, 'पापी का आयुष्य कितना हो, तो अच्छा माना जाएगा?' तब कहें कि, 'जितना कम जीए उतना अच्छा।' क्योंकि ऐसे पाप के संयोगों में है, इसलिए कम जीए तो वे संयोग बदलेंगे उसके! पर वह कम जीता नहीं है न! यह तो लेवल बताने के लिए हमें कहते हैं, परंतु अधिक जीता है, वह सौ वर्ष भी पूरे करता है और इतने सारे पाप के दोने इकट्ठे करता है कि कितने गहरे जाएगा वह तो वही जाने! और पुण्यशाली व्यक्ति अधिक जीए वह बहुत अच्छा है।

परभव की गठरियाँ किसकी?

परदेश की कमाई परदेश में ही रहेगी। यह मोटर-बंगले, मिलें, बीवी-बच्चे सभी यहीं पर रखकर जाना पड़ेगा। इस अंतिम स्टेशन पर तो किसी के बाप का भी चले वैसा नहीं है न! मात्र पुण्य और पाप साथ में ले जाने देंगे। दूसरी सादी भाषा में तुझे समझाऊँ तो यहाँ जो-जो गुनाह किए उनकी कलमें साथ में आएँगी। उस गुनाह की कमाई यहीं पर रह जाएगी और वापस केस चलेगा। कलमों के हिसाब

से नई देह प्राप्त करके फिर से नये सिरे से कमाई करके उधार चुकाना पड़ेगा। इसलिए मुए, पहले से ही सीधा हो जा न! 'स्वदेश' में तो बहुत सुख है। पर स्वदेश देखा ही नहीं न!

प्रश्नकर्ता : मनुष्य जन्म में सत्कार्य करने के बाद, उसके देहविलय के पश्चात्, उस आत्मा की परिस्थिति कैसी होती है?

दादाश्री : सत्कार्य करे तो पुण्य बंधता है। वह क्रेडिट होता है, तो मनुष्य में अच्छे घर में जन्म मिलता है। राजा होता है या प्रधानमंत्री बनता है या उससे भी अधिक सत्कार्य किए हों तो देवगति में जाता है। सत्कार्य करे वह क्रेडिट कहलाता है, वह फिर क्रेडिट भोगने जाता है। और खराब कार्य किए हों, वह डेबिट भोगने जाता है फिर, दो पैर में से चार पैर हो जाते हैं! यह आप एस. ई. बने हो वह क्रेडिट के कारण! और डेबिट हो तो मिल में नौकरी करनी पड़े। पूरे दिन मेहनत करे तो भी पूरा ही नहीं होता। इसलिए यह क्रेडिट-डेबिट के आधार पर ये चार गतियाँ और क्रेडिट-डेबिट उत्पन्न नहीं हुआ तो मोक्षगति में जाता है।

स्वार्थ करने से पापकर्म बंधते हैं और निःस्वार्थ करने से पुण्यकर्म बंधते हैं। पर दोनों ही कर्म हैं न? पुण्यकर्म का फल है वह सोने की बेड़ी है और पापकर्म का फल लोहे की बेड़ी है। पर दोनों ही बेड़ियाँ ही हैं न?

फर्क, स्वर्ग और मोक्ष में...

प्रश्नकर्ता : स्वर्ग और मोक्ष में क्या फर्क है?

दादाश्री : स्वर्ग तो यहाँ जो पुण्य करके जाते हैं न, पुण्य मतलब अच्छे काम करते हैं, शुभ काम करते हैं, यानी कि लोगों को दान देते हैं, किसी को दुःख नहीं होने देते, किसी की मदद करते हैं, ओब्लाइजिंग नेचर रखते हैं, ऐसे कर्म नहीं करते हैं लोग?

प्रश्नकर्ता : करते हैं।

दादाश्री : अर्थात् अच्छे काम करे तो स्वर्ग में जाता है और बुरे काम करे तो नर्क में जाता है। और अच्छे-बुरे काम मिक्श्चर करे पर उसमें बुरे काम कम करे, वह मनुष्य में आता है। इस तरह से चार भाग में काम करने के फल मिलते रहते हैं और काम करने वाला मोक्ष में नहीं जा सकता। मोक्ष के लिए तो कर्ताभाव नहीं रहना चाहिए। आत्मज्ञान मिले तब कर्ताभाव टूटता है और कर्ताभाव टूटे तो मोक्ष हो जाए।

पुण्य के फल कैसे?

पुण्य मतलब जमा रकम और पाप मतलब उधार रकम। जमा रकम जहाँ खर्च करनी हो वहाँ खर्च की जा सकती है। देवी-देवताओं को नज़रकैद होती है पर उन्हें भी मोक्ष तो नहीं मिलता। आपके घर शादी हो और आप सबकुछ भूल जाते हो, संपूर्ण मोह में तन्मय होते हो। आईस्क्रीम खाओ तो जीभ खाने में होती है, बैन्ड बजे तो कान को प्रिय लगता है। आँखें दूल्हेराजा को देख रही होती है, नाक अगरबत्ती और सेन्ट में जाती है। वे पाँचों ही इन्द्रियाँ काम में लग जाती है। मन झँझट में होता है। यह सब हो, वहाँ आत्मा याद नहीं आता। उसी प्रकार देवी-देवताओं को हमेशा वैसा ही होता है। इससे अनेक गुना विशेष सुख होता है इसलिए वे भान में ही नहीं होते। उन्हें आत्मा का खयाल ही नहीं होता। पर देवगति में भी *कढ़ापा-अजंपा* और ईर्ष्या होते हैं। देवी-देवता भी फिर तो निरे सुखों से ऊब जाते हैं। वह किस तरह? चार दिन विवाह में रोज़ लड्डू खिलाए हों तो पाँचवे दिन खिचड़ी याद आए वैसा है! वे लोग भी इच्छा करते हैं कि कब मनुष्यदेह मिले और भरतक्षेत्र में अच्छे संस्कारी परिवार में जन्म हो और ज्ञानी पुरुष से भेंट हो जाए। ज्ञानी पुरुष मिलें तब ही हल आए वैसा है। नहीं तो चतुर्गति की भटकन तो है ही।

पाप के फल कैसे?

आत्मा के ऊपर ऐसी परतें हैं, आवरण हैं कि एक व्यक्ति को अंधेरी कोठरी में डालकर रखें और उसे मात्र दो वक्त का खाने को

दें और जिस दुःख का अनुभव होता है, वैसे अपार दुःखों का अनुभव इन पेड़-पौधे आदि एकेन्द्रिय से लेकर पँचेन्द्रिय तक के जीवों को होता है। इन पाँच इन्द्रिय वाले मनुष्यों को इतना दुःख है, तो जिन्हें कम इन्द्रिय हैं उन्हें कितना दुःख होगा? पाँचवी से अधिक छठवी इन्द्रिय वाला कोई नहीं है। ये पेड़-पौधे और जानवर वे तिर्यंच गति हैं। तो उन्हें सख़्त कैद की सज़ा है। यह मनुष्य गति, वह सादी कैद वाला और नर्कगति में तो भयंकर दुःख हैं, उसका जैसा है वैसा वर्णन करूँ तो सुनते ही मनुष्य मर जाए। चावल उबालें और उछलें उससे लाख गुना अधिक दुःख होता है। एक जन्म में पाँच-पाँच बार मरण की वेदना होती है और फिर भी मृत्यु नहीं होती। वहाँ पर देह पारे जैसी होती हैं। क्योंकि उन्हें दुःख का वेदन करना होता है, इसलिए मृत्यु नहीं होती। उनके हर एक अंग छिद जाते हैं और फिर जुड़ जाते हैं। वेदना भोगनी ही पड़ती है। नर्कगति यानी उम्रकैद की सजा।

पाप-पुण्य के गलन के समय...

पाप का पूरण करते हैं न, उसका जब गलन होगा तब पता चलेगा! तब तेरे छक्के छूट जाएँगे। अंगारों के ऊपर बैठे हों, वैसा लगेगा!! पुण्य का पूरण करेगा तब पता चलेगा कि कैसा और ही तरह का मज़ा आता है। इसलिए जिस-जिस का पूरण करो वह देख-विचारकर करना कि गलन हो तब परिणाम कैसा आता है! पूरण करते समय सतत खयाल रखना कि, पाप करके किसी को धोखा देकर पैसा इकट्ठा करते समय हमेशा याद रखना कि वह भी गलन होने वाला है। वह पैसा बैंक में रखोगे तो वह भी जाने वाला तो है ही। उसका भी गलन तो होगा ही। और वह पैसा इकट्ठा करते समय जो पाप किया, जो रौद्रध्यान किया, तो ऊपर से उसकी दफ़ाएँ साथ में आने वाली हैं और जब उसका गलन होगा तब तेरी क्या दशा होगी?

पुण्य पूरा हो वह अलग कर दे ज्ञानी से...

पुण्य का स्वभाव कैसा है? खर्च हो जाता है। करोड़ों मन बर्फ हो पर उसका स्वभाव कैसा होता है? पिघल जाए वैसा।

तेरा हमारे साथ का संयोग पुण्य के आधार पर है। तेरा पुण्य खत्म हो जाए उसमें हम क्या करें? और तू मान बैठे कि यही संयोग मुझे चाहिए, फिर क्या हो? मार खा जाएगा। सिर भी टूट जाएगा। जितना मिला उतना लाभ। उसके आनंद में रहना कि मेरा पुण्य जगा है। तू ऐसा मानता है कि यह मनचाहा संयोग मिल जाए?

प्रश्नकर्ता : ऐसा नहीं।

दादाश्री : तब? यह नियमानुसार ही है न? या नियम से बाहर होगा?

प्रश्नकर्ता : नियमानुसार ही है।

दादाश्री : उसके बाद मान बैठें तो क्या होगा? वह तो कभी पुण्य जगे तब मुझसे भेंट हो जाती है। फिर बिछुड़ता है तब पता चल जाता है। इसलिए बिछड़ने की स्थिति में अनुभव किया हो तो फिर हर्ज नहीं है न अपने को। पलायन वृत्ति से कहीं कर्म से छूटा जा सकता है? मैं बड़ौदा में होऊँ, तू बड़ौदा में हो, तब भी कर्म मिलने नहीं देंगे! यह ज्ञान दिया हुआ है, जिस समय जो आ मिला वह 'व्यवस्थित' और उसका समभाव से निकाल कर। बस, इतनी ही बात है।

पुण्य हो तब तक दादा के पास बैठने का समय मिल जाता है, उस पुण्य का उपकार मानना चाहिए। यह हमेशा के लिए होता होगा कहीं? ऐसी आशा भी कैसे रखी जाए?

कुसंग से पाप का प्रवेश

इस दुनिया में सबसे बड़ा पुण्यशाली कौन है? जिसे कुसंग नहीं छुए। जिसे पाप करते हुए डर लगता है, वह बड़ा ज्ञान कहलाता है!

कुसंग से पाप का प्रवेश होता है और बाद में पाप काटता है। उसे जैसे ही फुरसत मिले तब और कोई कुसंग मिल जाता है, तब फिर कुसंग से निंदा करना बढ़ जाता है और निंदा करने से दाग़ पड़ जाते हैं। ये सारे दु:ख हैं वे उसके ही हैं। हमें किसी के बारे में भी

बोलने का अधिकार क्या है? हमें अपना देखना है। कोई दुःखी हो या सुखी, पर हमें उसके साथ क्या लेना–देना? यह तो राजा हो तो भी उसकी निंदा करते हैं। खुद को कुछ भी लेना–देना नहीं वैसी पराई बात! ऊपर से द्वेष और ईर्ष्या और उसके ही दुःख हैं। भगवान क्या कहते हैं कि वीतराग हो जा। तू है ही वीतराग, ये राग–द्वेष किसलिए? तू नाम में पड़ेगा तो राग–द्वेष हैं न? और अनामी हो जाएगा तो वीतराग हो गया!

सदुपयोग, आत्मार्थ के लिए ही...

ऐसा है न, यह पुण्य जागा है तो खाना–पीना सब घर बैठे आ मिलता है इसलिए यह सब टी.वी. देखना है, नहीं तो खाने–पीने का ठिकाना नहीं हो तो पूरे दिन मेहनत करने जाए या टी.वी. देखे? यानी कि ये पुण्य का दुरुपयोग करते हैं। इस पुण्य का सदुपयोग तो ऐसे करना चाहिए कि यह टाइम है वह आत्मा के लिए निकालना चाहिए। फिर भी टी.वी. नहीं ही देखना वैसा आग्रह नहीं है, थोड़ी देर देख भी लें, पर उसमें से रुचि निकाल देनी चाहिए सोचकर कि यह गलत है, यह देखते है वह।

परोपकार से बंधें पुण्य

प्रश्नकर्ता : पुण्य किस तरह सुधरते हैं?

दादाश्री : जो आए उसे 'आ भाई, बैठ।' उसकी आवभगत करे। अपने यहाँ चाय हो तो चाय, वर्ना जो हो वह, एक पराठे का टुकड़ा हो तो वह दे दें। पूछें कि, 'भाई, थोड़ा पराठा लोगे?' ऐसे प्रेम से व्यवहार करेंगे तो बहुत पुण्य इकट्ठे होंगे। औरों के लिए करना, वही पुण्य! घर के बच्चों के लिए तो हर कोई करता है।

प्रश्नकर्ता : पुण्य की वृद्धि हो, उसके लिए क्या करें?

दादाश्री : पूरा दिन लोगों पर उपकार ही करते रहें। ये मनोयोग, वाणीयोग और देहयोग लोगों के लिए खर्च करे, वह पुण्य कहलाता है।

पुण्य-पाप, पति-पत्नी के बीच में...

प्रश्नकर्ता : पति-पत्नी दोनों लगभग पूरा समय साथ-साथ होते हैं, उनका व्यवहार यानी उनके कर्म भी साथ में बंधे हुए होते हैं, तो उनके फल उन्हें किस प्रकार भोगने होते हैं?

दादाश्री : फल तो आपका भाव जैसा हो वैसा आपको फल भोगना होता है और उनका भाव हो वैसा उन्हें फल भोगना होता है।

प्रश्नकर्ता : ऐसा होता है कि पत्नी के पुण्य से पुरुष का चलता है? कहते हैं न पत्नी के पुण्य से, यह लक्ष्मी है या घर में सब अच्छा है, ऐसा होता है क्या?

दादाश्री : वह तो अपने लोग, एक कोई व्यक्ति पत्नी को बहुत मारता था न, तो उसे समझाया कि मुए, यह तेरी पत्नी का नसीब तो देख, किसलिए मारता है? उसके पुण्य का तो तू खाता है। उसके बाद बात शुरू हो गई। सभी जीवमात्र खुद के पुण्य का ही खाते हैं। हरकोई खुद के पुण्य का ही भोगता है। किसी को कुछ लेना-देना ही नहीं है फिर। एक किंचित् बाल जितनी भी झँझट नहीं है।

प्रश्नकर्ता : ऐसे दान करें, कोई शुभ कर्म करें, उदाहरण के रूप में पुरुष दान करें, स्त्री उसमें सहमत हो, उसका सहयोग हो, तो दोनों को फल मिलता है?

दादाश्री : पुरुष अर्थात् करने वाला और सहयोग हो अर्थात् कर्ता के प्रति अनुमोदन करने वाला। करने वाला, करवाने वाला और कर्ता के प्रति अनुमोदन करने वाला, किसी ने आपसे कहा हो कि यह करना, करने जैसा है, तो वह करवाने वाला कहलाता है, आप करने वाले कहलाते हो और स्त्री आपत्ति नहीं उठाए तो वह कर्ता के प्रति अनुमोदन करने वाली कहलाती है। इन सभी को पुण्य प्राप्त होता है। पर करने वाले के हिस्से में पचास प्रतिशत और पचास प्रतिशत अनुमोदना करने वाले के हिस्से में, उन दो लोगों में बंट जाता है।

प्रश्नकर्ता : बहनजी कहती हैं, हमें पच्चीस प्रतिशत दो, तो वह नहीं चलेगा।

दादाश्री : फिर खुद करो। घर के लोग तो मालिक (पति) से कहते हैं कि यह आप उल्टा-सीधा करके पैसे लाओ तो उसका पाप आपको लगेगा, हमें कुछ भोगना नहीं है। हमें चाहिए नहीं ऐसा। जो करे वह भुगते और घर के लोग कहते हैं कि हमें नहीं चाहिए, यानी उन्होंने अनुमोदना नहीं की इसलिए उससे मुक्त हो गए। और 'ऐसा करना' कहे तो हिस्सेदार हो गया, पार्टनरशिप करनी हो तो अपनी मर्ज़ी की बात है। उसमें कहीं डीड (लिखित) नहीं करनी पड़ती कि स्टेम्प नहीं लाना पड़ता। बिना स्टेम्प के चलता है।

'प्याले फूटें तो भी पुण्य बाँधा?'

कोई कहेगा कि, 'हमें ज्ञान नहीं मिला है, समकित नहीं हुआ है, तो मुझे क्या करना चाहिए? मुझे दूसरा नुकसान नहीं उठाना है!' तो मैं उसे कह दूँ कि, 'यह मंत्र सीख जा, कि यदि प्याले फूट जाएँ तब बोलना कि, 'अच्छा हुआ मिटा जंजाल, अब नये प्याले लाऊँगा।' तो उससे पुण्य बंधेगा। क्योंकि चिंता करने की जगह पर उसने आनंद किया, इसलिए पुण्य बंधेगा। इतना ज़रा आ जाए न तो बहुत हो गया! मुझे बचपन से ही ऐसी समझ थी, किसी दिन चिंता ही नहीं की। ऐसा कुछ हो जाए तो उस घड़ी ऐसा कुछ अंदर आ ही जाता था। ऐसे सिखाने से नहीं आता था, पर तुरन्त ही हाज़िर जवाब सब आ ही जाता था।

किसी के निमित्त से किसी को मिलता है?

प्रश्नकर्ता : जिसके लिए खर्च किया, उसके हिस्से में पुण्य जाता है न? नहीं कि करने वालों को। आप जिसके लिए जो कार्य करते हो, उसका फल उसे मिलेगा? हम जिसके लिए जो कार्य करें, उसका पुण्य करें, वह उसे मिलेगा, हमें नहीं मिलेगा? करे उसे नहीं मिलेगा? इसमें सही क्या है?

दादाश्री : हम करें और दूसरे को मिले? ऐसा सुना है कभी?

प्रश्नकर्ता : उसके निमित्त से हम करते हैं न?

दादाश्री : उसके निमित्त से हम करें न, उसके निमित्त से हम खाते हों तो क्या हर्ज है? नहीं, नहीं। वैसा सब इसमें फर्क नहीं है। यह तो बनावट करके लोगों को उल्टे रास्ते पर चढ़ाते हैं, उसके निमित्त से! उसे नहीं खाना हो और हम खाएँ तो क्या हर्ज है? पूरा नियम वाला जगत् है सारा! आप करो तो आपको ही भुगतना पड़ेगा। दूसरे किसी को लेना-देना नहीं है।

वाह-वाह में खर्च हुआ पुण्य

प्रश्नकर्ता : यह बताते हैं, वैसा नियम हो तो हीराबा के पीछे आपने खर्च किया, तब आपको पुण्य मिलेगा।

दादाश्री : मुझे क्या मिलेगा? हमें लेना-देना नहीं है। मुझे तो कुछ लेना-देना ही नहीं है न! इसमें पुण्य नहीं बंधता। यह तो पुण्य भोग लिया जाता है। वाह-वाह हो जाती है।

या फिर कोई खराब कर जाए तो, 'मुए को देखो न, बिगाड़ दिया सभी' कहेंगे। इसलिए यहाँ का सब यहाँ पर ही मिल जाता है। हाईस्कूल बनवाया था तो यहीं पर वाह-वाह हो गई। वहाँ कुछ मिलेगा नहीं।

प्रश्नकर्ता : स्कूल तो बच्चों के लिए बनवाया, वे लोग पढ़ें-लिखें, सद्विचार उत्पन्न हों।

दादाश्री : वह अलग चीज़ है। पर आपकी वाह-वाह हुई, तो मानों पूर्ण हो गया, खर्च हो गया।

टेन्डर पास करवाने चाहिए पुण्य...

प्रश्नकर्ता : ये सभी लोग लक्ष्मी के पीछे बहुत दौड़ते हैं। तो उसका चार्ज अधिक होगा न, तो उन्हें अगले जन्म में लक्ष्मी अधिक मिलनी चाहिए न?

दादाश्री : हमें लक्ष्मी धर्म के रास्ते पर खर्च करनी चाहिए, ऐसा चार्ज किया हो तो अधिक मिलेगी।

प्रश्नकर्ता : पर ऐसे मन से भाव करते रहें कि मुझे लक्ष्मी मिले, तो अगले भव में, ऐसे भाव किए वह चार्ज किया, तो उसे कुदरत लक्ष्मी की पूर्ति नहीं करेगी?

दादाश्री : नहीं, नहीं। उससे लक्ष्मी प्राप्त नहीं होती। यह लक्ष्मी मिलने के जो भाव करते हैं न, उससे लक्ष्मी मिलने वाली हो तो भी नहीं मिलती। उल्टे अंतराय पड़ते हैं। लक्ष्मी याद करने से नहीं मिलती, वह तो पुण्य करने से मिलती है।

'चार्ज' मतलब पुण्य का चार्ज करे तो लक्ष्मी मिलती है। वह भी लक्ष्मी अकेली नहीं मिलती। पुण्य के चार्ज में जिसकी इच्छा होती है कि मुझे लक्ष्मी की बहुत ज़रूरत है, तो उसे लक्ष्मी मिलती है। कोई कहेगा, मुझे तो सिर्फ धर्म ही चाहिए। तो सिर्फ धर्म मिल जाएगा और पैसा नहीं भी हो। यानी उस पुण्य का हमने फिर टेन्डर भरा हुआ हो कि ऐसा मुझे चाहिए। वह मिलने में पुण्य खर्च हो जाता है।

कोई कहेगा 'मुझे बंगले चाहिए, मोटरें चाहिए, ऐसा चाहिए, वैसा चाहिए।' तो पुण्य उसमें खर्च हो जाएगा। तो धर्म के लिए कुछ भी नहीं रहेगा। और कोई कहेगा, मुझे धर्म ही चाहिए। मोटरें नहीं चाहिए। मुझे तो इतने दो कमरे होंगे तो भी चलेगा, पर धर्म ही अधिक चाहिए। तो उसे धर्म अधिक होगा और दूसरा सब कम होगा। अर्थात् हर कोई अपने हिसाब से पुण्य का टेन्डर भरता है।

दान मतलब बो कर काटो

प्रश्नकर्ता : आत्मा और दान का कोई संबंध नहीं है तो फिर यह दान करना ज़रूरी है या नहीं?

दादाश्री : दान मतलब क्या? कि देकर लो। यह जगत् प्रतिघोष स्वरूप है। इसलिए जो आप करोगे न वैसा प्रतिघोष आएगा। उसके

ब्याज के साथ। इसलिए आप दो और लो। यह पिछले जन्म में दिया था, अच्छे काम में पैसा खर्च किया था, वैसा कुछ किया था, उसका हमें फल मिला, अब वापस ऐसा नहीं करेगा तो फिर मटियामेट हो जाएगा। हम खेत में से गेहूँ तो ले आए चार सौ मन, पर भाई उसमें से पचास मन बोने नहीं गए तो फिर?

प्रश्नकर्ता : तो उगेगा नहीं।

दादाश्री : वैसा है यह सब। इसलिए देना चाहिए। इसका प्रतिघोष ही आएगा, वापस आएगा, अनेक गुना होकर। पिछले जन्म में दिया था इसीलिए तो अमरीका में आया गया, नहीं तो अमरीका आना आसान है क्या? कितने पुण्य किए हो तब यह प्लेन में बैठने को मिलता है, कितने ही लोगों ने प्लेन देखा तक नहीं है!

प्रश्नकर्ता : जैसे इन्डिया में कस्तूरभाई लालभाई की पीढ़ी है, तो उनकी दो, तीन, चार पीढ़ियों तक पैसे चलते रहते हैं, उनके बच्चों के बच्चों तक। जबकि यहाँ अमरीका में कैसा है कि पीढ़ी होती है, पर बहुत हुआ तो छह-आठ वर्ष में सब खत्म हो जाता है, या फिर पैसे हों तो चले जाते हैं और नहीं हों तो पैसे आ भी जाते हैं। तो उसका कारण क्या होगा?

दादाश्री : ऐसा है न, वहाँ का जो पुण्य है न, इन्डिया का पुण्य, वह पुण्य इतना गाढ़ होता है कि धोते रहें, फिर भी जाता नहीं और पाप भी इतने गाढ़ होते हैं कि धोते रहें, फिर भी जाते नहीं। इसलिए, वैष्णव हो या जैन हो, पर उसने पुण्य इतने मज़बूत बाँधे हुए होते हैं कि धोते रहें फिर भी जाते नहीं। जैसे की पेटलाद के दातार सेठ, रमणलाल सेठ की सात-सात पीढ़ियों तक सम्पन्नता रही। फावड़ों से खोद-खोदकर धन दिया करते थे लोगों को, फिर भी कभी कमी नहीं पड़ी। उन्होंने पुण्य जबरदस्त बाँधा था, अचूक। और पाप भी ऐसे अचूक बाँधते हैं, सात-सात पीढ़ियों तक गरीबी नहीं जाती। अत्यंत दुःख भुगतते हैं, अर्थात् एक्सेस भी होता है और मीडियम भी रहता है।

यहाँ अमरीका में तो उफनता भी है और फिर बैठ भी जाता है और फिर उफनता भी है। बैठ जाने के बाद, फिर से वापस उफनता है। यहाँ देर नहीं लगती और वहाँ इन्डिया में तो बैठ जाने के बाद उफान आने में बहुत टाइम लगता है। इसलिए वहाँ तो सात-सात पीढ़ियों तक चलता था। अब सभी पुण्य घट गए हैं। क्योंकि क्या होता है? कस्तूरभाई के यहाँ जन्म कौन लेगा? तब कहें, ऐसे पुण्यशाली जो उनके जैसे ही हों, वे ही वहाँ जन्म लेंगे। फिर उसके यहाँ कौन जन्मे? वैसा ही पुण्यशाली फिर वहाँ जन्मता है। वह कस्तूरभाई का पुण्य काम नहीं करता। वह फिर दूसरा वैसा आया हो न तो फिर उसके पुण्य। यानी कहलाती है कस्तूरभाई की पीढ़ी, और आज तो ऐसे पुण्यशाली हैं ही कहाँ? अब अभी इन पिछले पच्चीस वर्षों में तो कोई खास ऐसा नहीं है।

दो नंबरी धन का दान...

प्रश्नकर्ता : दो नंबर के रुपयों का दान दें, तो वह नहीं चलेगा?

दादाश्री : दो नंबर का दान नहीं चलेगा। पर फिर भी कोई मनुष्य भूखा मर रहा हो और दो नंबर का दान दें तो उसे खाने के लिए चलेगा न! दो नंबर में कुछ खास नियम के अनुसार परेशानी आती है, पर और तरह से हर्ज नहीं होता। वह धन होटल वाले को दें तो वह लेगा या नहीं लेगा?

प्रश्नकर्ता : ले लेगा।

दादाश्री : हाँ, वह व्यवहार शुरू ही हो जाता है।

प्रश्नकर्ता : धर्म में दो नंबर का पैसा है, वह खर्च होता है अभी के जमाने में, तो उससे लोगों को पुण्योपार्जन होता है क्या?

दादाश्री : अवश्य होता है न! उसने त्याग किया न उतना! अपने पास आए हुए का त्याग किया न! पर उसमें हेतु के अनुसार फिर वह पुण्य वैसा हो जाता है हेतु वाला! ये पैसे दिए, वह एक

ही वस्तु नहीं देखी जाती। पैसों का त्याग किया वह निर्विवाद है। बाकी पैसा कहाँ से आया, हेतु क्या है, ये सारा प्लस-माइनस होते-होते जो बाकी रहेगा, वह उसका। उसका हेतु क्या है कि सरकार ले जाएगी, उसके बजाय इसमें डाल दो न!

शास्त्र वांचन, पाप क्षय करते हैं?

प्रश्नकर्ता : सत् शास्त्रों के पठन से पापों का क्षय नहीं हो सकता?

दादाश्री : नहीं, उससे पुण्य ज़रूर बंधता है। पापों का क्षय नहीं होता। दूसरा नया पुण्य बंधता है, वह पुण्यानुबंधी पुण्य कहलाता है। सत् शास्त्र का अभ्यास करते हैं उसमें से स्वाध्याय होता है, उससे चित्त की एकाग्रता, मन की एकाग्रता बहुत सुंदर हो जाती है।

पाप धुलें, प्रतिक्रमण से

प्रश्नकर्ता : पाप धोना आता हो तो?

दादाश्री : इस तरह धोना नहीं आ सकता। जब तक 'ज्ञानी पुरुष' रास्ता नहीं दिखाते, तब तक पाप धोना आ ही नहीं सकता। पाप धोना यानी क्या? कि प्रतिक्रमण करना। अतिक्रमण, वह पाप कहलाता है। व्यवहार से बाहर कोई भी क्रिया की, तो वह पाप कहलाता है, अतिक्रमण कहलाता है। अत: उसका प्रतिक्रमण करना पड़ेगा। इससे फिर वे सारे पाप धुल जाएँगे, नहीं तो पाप नहीं धुलेंगे।

नहीं होता कभी पछतावा बनावटी

दादाश्री : इस तरह के आप कितने प्रतिक्रमण करते हो?

प्रश्नकर्ता : किसी को दु:ख हो जाए तो तुरन्त पछतावा करता हूँ।

दादाश्री : पछतावा तो जो वेदना होती है वह है। पछतावा प्रतिक्रमण नहीं कहलाता। फिर भी वह अच्छा है।

प्रश्नकर्ता : एक ओर पाप करता रहे और एक ओर पछतावा करता रहे। ऐसे तो चलता ही रहेगा।

दादाश्री : वैसा नहीं होता। जो व्यक्ति पाप करे और वह यदि पछतावा करे तो वह बनावटी पछतावा कर ही नहीं सकता, और सच्चा ही पछतावा होता है। पछतावा सच्चा होता है, इसलिए उसके बाद प्याज़ की एक परत निकल जाती है। फिर भी प्याज़ तो पूरी की पूरी ही दिखती है वापस। फिर वापस दूसरी परत हटती है, पछतावा कभी भी बेकार नहीं जाता है। हर एक धर्म ने पछतावा ही करना सिखाया है। क्रिश्चियनों के वहाँ भी पछतावा ही करने को कहा है।

पापों का प्रायश्चित किस तरह?

प्रश्नकर्ता : अपने किए हुए पाप भगवान के मंदिर में जाकर हर रविवार को कबूल कर लिए हों तो फिर पाप माफ हो जाएँगे न?

दादाश्री : इस तरह यदि पाप धुल जाते तो कोई बीमार-वीमार होता ही नहीं न? फिर तो कोई दुःख होता ही नहीं न? पर ये तो अपार दुःख पड़ते हैं। माफी माँगने का अर्थ क्या है कि आप माफी माँगो तो आपके पाप का मूल जल जाता है। इसलिए फिर वह पनपता नहीं है, पर उसका फल तो भोगना ही पड़ेगा न!

प्रश्नकर्ता : कई जड़ें तो फिर से वापस निकलती हैं।

दादाश्री : ठीक से जला नहीं हो तो फिर से निकलता रहेगा। बाकी, मूल चाहे जितना जल गया हो पर फल तो भुगतने ही पड़ते हैं। भगवान को भी भुगतने पड़े थे! कृष्ण भगवान को भी यहाँ (पैर में) तीर लगा था। उसमें कुछ नहीं हो सकता। मुझे भी भुगतना पड़ता है!

हर एक धर्म में माफी (क्षमा) का स्थान है। क्रिश्चियन, मुस्लिम, हिन्दू सभी में होता है। पर अलग-अलग प्रकार से होता है।

प्रश्नकर्ता : पादरी भी कहते हैं कि हमारे पास कन्फेशन (कबूल) कर जाओ तो सब पापों का नाश हो जाएगा।

दादाश्री : ऐसे कन्फेस करना क्या आसान है? आपसे कन्फेशन होगा क्या? वह तो अंधेरी रात में अंधेर में करते हैं, वह व्यक्ति उजाले में मुँह नहीं दिखाता। रात को अँधेरा होगा तो कन्फेशन करूँगा, कहेगा। और मेरे पास तो चालीस हज़ार लोगों ने, लड़कियों ने भी उनका सबकुछ कन्फेशन किया हुआ है। एक-एक चीज़ कन्फेस की हैं। ऐसे लिखकर दे दिया है। खुलेआम कन्फेस किया, तो फिर पाप नाश हो ही जाएँगे न? कन्फेस करना आसान नहीं है।

प्रश्नकर्ता : अर्थात् यह प्रतिक्रमण करते हैं और वह कन्फेस, दोनों एक समान ही हुए न फिर?

दादाश्री : नहीं, वह एक समान नहीं हुआ। प्रतिक्रमण तो, अतिक्रमण हो जाए और फिर धोते रहें और वापस दाग़ पड़े तो वापस धोएँ, और पाप कन्फेस करना, ज़ाहिर करना, वे दोनों चीज़ें अलग हैं।

प्रश्नकर्ता : प्रतिक्रमण और पश्चाताप में फर्क क्या है?

दादाश्री : पश्चाताप बिना नाम निर्देश के है। क्रिश्चियन रविवार को चर्च में पश्चाताप करते हैं। जो पाप किए उनका सामूहिक पश्चाताप करते हैं। और प्रतिक्रमण तो कैसा है कि, जिसने गोली मारी, जिसने अतिक्रमण किया, वह प्रतिक्रमण करे, उसी क्षण! 'शूट ओन साइट' (देखते ही गोली मारना) उसे धो डाले। वह भाव प्रतिक्रमण कहलाता है।

पछतावे से घटे दंड

प्रश्नकर्ता : पाप को निर्मूल करने के लिए तो उत्तम मार्ग प्रायश्चित है। यह बहुत सुंदर बात है, वैसा पुराणों में सत् पुरुषों ने कहा है। क्या खूनी आदमी खून करने के बाद पछतावा करे तो उसे माफी मिल सकती है?

दादाश्री : खूनी आदमी खून करने के बाद खुश हो तो, उसका जो दंड बारह महीने का होने वाला था, तो वह तीन वर्ष का हो जाता

है, और खूनी आदमी खून करने के बाद पछतावा करे तो बारह महीने का जो दंड होने वाला होता है, वह छह महीने का हो जाता है। कोई भी गलत कार्य करके फिर खुश होओगे तो वह कार्य तीन गुना फल देगा। कार्य करने के बाद पछतावा करोगे कि गलत कार्य किया, तो दंड कम हो जाएगा।

ज्ञानी के ज्ञान से, निबटारा कर्मों का!

प्रश्नकर्ता : कई बार व्यवहार में अलग-अलग तरह के कर्म करने पड़ते हैं, जिन्हें बुरे कर्म अथवा पाप कर्म कहते हैं। तो उन पाप कर्मों से कैसे बचा जाए?

दादाश्री : पापकर्म के सामने उसे जितना ज्ञान होगा, वह ज्ञान हेल्प करेगा। हमें यहाँ से स्टेशन जाना हो, तो स्टेशन जाने का ज्ञान हमें हो तो वह हमें पहुँचाएगा। पाप कर्मों से किस तरह बचा जाए? यानी ज्ञान जितना होगा इसमें, पुस्तकों में ज्ञान या अन्य किसी के पास ज्ञान होता नहीं है। वह तो व्यावहारिक ज्ञान होता है। निश्चय ज्ञान सिर्फ ज्ञानियों के पास होता है। पुस्तक में वह निश्चय ज्ञान नहीं होता। ज्ञानियों के हृदय में छुपा हुआ होता है। वह निश्चय ज्ञान जब हम वाणी के रूप में सुनें तब हमारा निबेड़ा आएगा। नहीं तो पुस्तकों में व्यावहारिक ज्ञान होता है, वह भी कई स्पष्टीकरण दे सकता है। उससे बुद्धि बढ़ती है। मतिज्ञान बढ़ता जाता है। श्रुतज्ञान से मतिज्ञान बढ़ता है, और पाप से कैसे छूटें इसका निबेड़ा मतिज्ञान लाता है। बाकी, और कोई उपाय है नहीं, और या फिर प्रतिक्रमण करे तो छूटे। पर प्रतिक्रमण कैसा होना चाहिए? 'शूट ऑन साइट' होना चाहिए। दोष होते ही प्रतिक्रमण किया जाए, तब निबटारा होगा।

करो ये विधियाँ, पापोदय के समय!

प्रश्नकर्ता : प्रतिक्रमण करने से शायद नये पाप नहीं बंधेंगे, लेकिन पुराने पाप तो भुगतने ही पड़ेंगे न?

दादाश्री : आपका यह कहना ठीक है कि प्रतिक्रमण से नये

पाप नहीं बंधेंगे लेकिन पुराने पाप तो भुगतने ही पड़ेंगे। अब वह *भोगवटा* कम ज़रूर होगा, उसके लिए मैंने फिर रास्ता बताया है कि तीन मंत्र एक साथ बोलना। उससे भी *भोगवटा* का फल हल्का हो जाएगा। किसी आदमी के सिर पर डेढ़ मन का वज़न हो और बेचारा ऐसे तंग आ गया हो, लेकिन उसे एकदम से ऐसे कोई चीज़ दिख जाए और दृष्टि वहाँ पड़े तो वह अपना दुःख भूल जाएगा। वज़न हैं फिर भी उसे दुःख कम लगेगा। वैसे ही, ये जो त्रिमंत्र हैं न, उन्हें बोलने से वह वज़न लगेगा ही नहीं।

मंत्र का सही अर्थ क्या है? मंत्र अर्थात् मन को शांत रखे वह। भगवान की भक्ति करते हुए संसार में विघ्न नहीं आएँ, इसलिए भगवान ने तीन मंत्र दिए हैं। (1) नवकार मंत्र (2) ॐ नमो भगवते वासुदेवाय (3) ॐ नमः शिवाय। यानी ये मंत्र हेल्पिंग चीज़ हैं। आप किसी दिन त्रिमंत्र बोले थे? एक ही दिन त्रिमंत्र बोले थे? तो ज़रा ज़्यादा बोलो न, ताकि सब हल्का हो जाए और आपको जो भय लग रहा होगा, वह भी बंद हो जाएगा।

पुण्य का उदय क्या काम करता है? सबकुछ खुद की इच्छा अनुसार होने देता है। पाप का उदय क्या ऐसा होने देता है? सबकुछ अपनी इच्छा से उल्टा कर देता है।

पाप धुल गए उसकी प्रतीति

प्रश्नकर्ता : हमारे पाप कर्मों के लिए अभी किस तरह धोना चाहिए?

दादाश्री : पापकर्म के तो जितने दाग़ पड़े हैं, उतने प्रतिक्रमण करने चाहिए, वे दाग़ गाढ़े हों तो बार-बार धोते रहना चाहिए, बार-बार धोते रहना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : वह दाग़ निकल गया या नहीं निकला वह किस तरह पता चले?

दादाश्री : वह तो भीतर मन चोखा हो जाएगा न, तो पता चल जाएगा। चेहरे पर मस्ती छा जाएगी। आपको पता नहीं चलेगा कि दाग़ ही चला गया? क्यों नहीं चलेगा? हर्ज क्या है? और नहीं धुले तो भी हमें हर्ज नहीं। तू प्रतिक्रमण कर न! तू साबुन डालता रह न! पाप को तू पहचानता है क्या?

सामने वाले को दुःख हो वह पाप है, किसी जीव को, वह फिर मनुष्य हो, जानवर हो या पेड़ हो। बिना काम के पेड़ के पत्ते तोड़ते रहें तो उसे भी दुःख होता है, इसलिए वह पाप कहलाता है। इसलिए थोड़ा भी, किंचित् मात्र दुःख नहीं हो ऐसा होना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : पर मनुष्य अपने स्वभाव के अनुसार करता हो तो भी उसमें उसे पुण्य-पाप लगता है?

दादाश्री : सामने वाले को दुःख हो तो पाप लगता है। वह स्वभाव के अनुसार करता है, पर उसे समझना चाहिए कि मेरे स्वभाव से सामने वाले को दुःख हो रहा है। इसलिए मुझे उससे माफी माँग लेनी चाहिए कि मेरा स्वभाव टेढ़ा है और उससे उसे दुःख हुआ है, इसलिए माफी मांगता हूँ।

हम प्रतिक्रमण करें तो बहुत अच्छा है। अपने कपड़े साफ हो जाएँगे न? अपने कपड़ों में मैल किसलिए रहने दें? दादा ने ऐसा रास्ता दिखाया है, तो किसलिए साफ नहीं कर डालें?

प्रश्नकर्ता : अतिक्रमण कब होता है, कि कुछ पिछले जन्मों का हिसाब होगा तभी न?

दादाश्री : हाँ, तभी होगा।

प्रश्नकर्ता : अर्थात् अपने लिए जब प्रतिक्रमण करते हैं, तब पिछले सभी जन्मों के पापों के लिए प्रतिक्रमण होता है क्या?

दादाश्री : वह हिसाब हम तोड़ देते हैं। यानी अपने लोग 'शूट ऑन साइट' प्रतिक्रमण करते हैं, जिससे अपने दोष तुरन्त ही निर्मल हो जाते हैं।

खेती के पाप धोने की विधि

प्रश्नकर्ता : हम ठहरे किसान, और तम्बाकू की खेती करते हैं तब हमें ऊपर से हर एक पौधे की कोंपल यानी उसकी गरदन तोड़ ही देनी पड़ती है। उसका पाप तो लगेगा ही न? तो इस पाप का निवारण किस तरह करना चाहिए?

दादाश्री : वह तो भीतर मन में ऐसा होना चाहिए कि कैसा यह धंधा, कहाँ से मेरे हिस्से में आया? बस उतना ही। पौधे की कोंपल निकाल देना, पर मन में ये काम कहाँ से मेरे हिस्से में आया, ऐसा पश्चताप होना चाहिए। ऐसा नहीं करना चाहिए, ऐसा मन में होना चाहिए, बस।

प्रश्नकर्ता : पर यह पाप तो हुआ ही न?

दादाश्री : वह तो है ही। वह आपको नहीं देखना है। होता रहता है, उस पाप को नहीं देखना है। यह नहीं होना चाहिए वैसा आपको नक्की करना चाहिए। निश्चय करना चाहिए। यह काम कहाँ मिला? दूसरा अच्छा मिला होता तो हम ऐसा नहीं करते। जब तक यह नहीं जाना हो तब तक पश्चाताप नहीं होता। खुश होकर पौधे को फेंक देते। हमारे कहे अनुसार करना न। फिर आपकी सारी जिम्मेदारी हमारी। पौधे को फेंक दो उसमें हर्ज नहीं है, पश्चाताप होना चाहिए कि यह कहाँ से आया मेरे हिस्से में।

प्रश्नकर्ता : कपास में दवाई छिड़कनी पड़ती है, तो क्या करें? उसमें हिंसा तो होती ही है न?

दादाश्री : अनिवार्य रूप से जो-जो कार्य करने पड़ें, वह प्रतिक्रमण करने की शर्त पर करने चाहिए। आपको इस संसार व्यवहार में कैसे चलना है, वह नहीं आता है। वह हम आपको सिखाएँगे, ताकि नये पाप नहीं बंधे।

खेतीबाड़ी में जीव-जंतु मरते हैं, उसका दोष तो लगेगा ही न? इसलिए खेतीबाड़ी वालों को हररोज़ पाँच-दस मिनट भगवान से प्रार्थना

करनी चाहिए कि यह दोष हुए उसकी माफी माँगता हूँ। किसान हो उसे कहते हैं कि तू यह धंधा करता है, उसमें जीव मरते हैं। उसका इस तरह से प्रतिक्रमण करना।

सौ प्रतिशत धुल जाएँ पाप

प्रश्नकर्ता : अर्थात् माफी माँगने से अपने पापों का निवारण हो जाता है क्या?

दादाश्री : उससे ही पापों का निवारण हो जाता है और कोई दूसरा रास्ता ही नहीं है।

प्रश्नकर्ता : तो फिर बार-बार माफी माँगे और बार-बार पाप करते रहें?

दादाश्री : बार-बार माफी माँगने की छूट है। बार-बार माफी माँगनी पड़ेगी। हाँ, सौ प्रतिशत छूटने का रास्ता यही है! माफी माँगने के अलावा और किसी रास्ते छूट ही नहीं सकते इस जगत् में से। प्रतिक्रमण से सभी पाप धुल जाते हैं।

प्रश्नकर्ता : प्रतिक्रमण करने से पाप नाश होते हैं, उसके पीछे साइन्स क्या है?

दादाश्री : अतिक्रमण से पाप होते हैं और प्रतिक्रमण से पापों का नाश होता है। वापस लौटने से पापों का नाश होता है।

प्रश्नकर्ता : तो फिर कर्म का नियम कहाँ लागू होता है? हम माफी माँगे और कर्म से छूट जाएँ तो फिर उसमें कर्म का नियम नहीं रहा न?

दादाश्री : यही कर्म का नियम है! माफी माँगनी वही कर्म का नियम है!!

प्रश्नकर्ता : तब तो सभी पाप करते जाएँ और माफी माँगते जाएँ।

दादाश्री : हाँ, पाप करते जाना और माफी माँगते जाना है, यही भगवान ने कहा है।

प्रश्नकर्ता : परंतु सच्चे मन से माफी माँगनी है न?

दादाश्री : माफी माँगने वाला सच्चे मन से ही माफी माँगता है और खोटे मन से माफी माँगेगा तो भी चला लेंगे। तब भी माफी माँगना।

प्रश्नकर्ता : तब तो फिर उसे आदत पड़ जाएगी?

दादाश्री : आदत पड़ जाए तो भले पड़ जाए पर माफी माँगना। माफी माँगे बिना तो बन आया समझो। माफी का अर्थ क्या है? उसे प्रतिक्रमण कहा जाता है और दोषो को क्या कहा जाता है? अतिक्रमण।

कर्म का नियम क्या है? अतिक्रमण करें तो उसका प्रतिक्रमण करो। समझ में आया आपको?

प्रश्नकर्ता : हाँ।

दादाश्री : इसलिए माफी अवश्य माँगो। और ये अक्लमंद, ज़रूरत से ज़्यादा अक्लमंद की बात जाने दो! कोई गलत करता हो और माफी माँगता हो तो माँगने दो न! 'दिस इज़ कम्पलीट लॉ' (यह पूर्ण कानून है)।

पश्चाताप का सर्वश्रेष्ठ साबुन

प्रश्नकर्ता : पाप दूर करने के लिए प्रायश्चित के सिवाय दूसरा कोई उपाय है क्या?

दादाश्री : पाप दूर करने के लिए प्रायश्चित के सिवाय दूसरा कोई उपाय नहीं है। ये सारे पाप, वे क्या है? ये पाप जो है न, वह किसे पाप कहते हैं हम? तब कहें कि, जो आप यह सब करते हो, वह करने में हर्ज नहीं है। ये सभी बैठे हैं। अभी किसी को हर्ज नहीं है। उसमें कोई एक व्यक्ति कहे कि, 'क्यों आप देर से आते हो?' हमें ऐसा कहे, तब उसने अतिक्रमण किया, ऐसा कहा जाएगा। जो लोगों को पसंद नहीं आए कि ऐसा क्यों बोलता है? वह अतिक्रमण किया कहलाता है। वह अतिक्रमण करता है, इसीलिए ही भगवान ने प्रतिक्रमण करने को कहा है। अर्थात् पश्चाताप कितने का करना है?

कि जिससे लोगों को दु:ख हो, ऐसी बात के लिए पश्चाताप करना। क्या कहते हैं? पसंद आए उसके लिए नहीं। यानी प्रायश्चित करना पड़ेगा। तू करता है?

प्रश्नकर्ता : हाँ।

दादाश्री : दादा भगवान के नाम से प्रतिक्रमण करता है या नहीं करता?

प्रश्नकर्ता : वह किताब दी है न? उसमें कहे अनुसार करता हूँ। नौ कलमें करता हूँ।

दादाश्री : करता है न? वह प्रतिक्रमण ही है। सबसे बड़ा प्रतिक्रमण, दादा भगवान की नौ कलमें रखी गईं हैं न, वे पूरे जगत् के लिए कल्याणकारी प्रतिक्रमण हैं।

प्रश्नकर्ता : यह बात सच है कि पश्चाताप के घड़े में चाहे जैसा पाप हो तो भी....

दादाश्री : हल्का हो जाता है, पश्चाताप के कारण।

प्रश्नकर्ता : पूर्ण रूप से जलकर खाक़ नहीं हो जाते?

दादाश्री : पूर्णतया जल भी जाते हैं। ऐसे कितने ही पाप तो जल भी जाते हैं, खत्म हो जाते हैं। पश्चाताप का साबुन ऐसा है कि बहुत सारे कपड़ों पर काम करता है।

प्रश्नकर्ता : और उसमें आपकी साक्षी में करें, इसलिए फिर क्या बाकी रहा?

दादाश्री : कल्याण हो जाए। इसलिए पश्चाताप के साबुन के समान दुनिया में और कोई साबुन नहीं है।

नहीं है निवृत्ति पाप-पुण्य से...

प्रश्नकर्ता : सभी सामान्य मनुष्य जानते हैं कि पाप क्या है और पुण्य क्या है, फिर भी उनमें से निवृत्त क्यों नहीं हो सकते?

दादाश्री : हाँ, यही प्रश्न दुर्योधन ने कृष्ण भगवान से किया था कि पाप को जानता हूँ और पुण्य को भी जानता हूँ अर्थात् अधर्म को जानता हूँ और धर्म को भी जानता हूँ, परंतु अधर्म से निवृत्ति होती नहीं और धर्म में प्रवृत्ति होती नहीं।

प्रश्नकर्ता : वह किसलिए नहीं होती?

दादाश्री : उसने उस अधर्म को जाना ही नहीं है। पहले जानना चाहिए कि, 'मैं कौन हूँ?' यह सब किसलिए है? किसलिए यह भाई मुझ पर फन फैलाता है, और मुझे दूसरा भाई क्यों नहीं मिला? ये रोज़ गालियाँ सुनाता रहे, ऐसा भाई क्यों मिला? उसे तो बहुत अच्छा भाई मिला है, इन सबके पीछे कारण क्या है? वह सब समझना नहीं पड़ेगा?

प्रश्नकर्ता : वह किस तरह समझना चाहिए?

दादाश्री : वे पूर्वजन्म के अपने कर्मों के हिसाब हैं, किसी भगवान ने इसमें हाथ नहीं डाला है। यह तो हर एक के कर्मों के हिसाब से सारे फायदे-नुकसान है। उसमें अहंकार करता है, इसलिए निरे पाप-पुण्य बंधते हैं। उन्हें फिर से भोगने के लिए जाना पड़ता है। इसलिए इन गतियों में भटकना पड़ता है। जेल हैं सभी। वह जेल भोगकर आ जाता है और वापस था वैसा का वैसा ही। फिर वापस अहंकार नहीं करे तो छुटकारा होगा। इसलिए मोक्ष में जाना हो तो छुटाकार पा लो। उसमें 'मैं कौन हूँ' की खोज करे और उसे जाने तो छुटकारा हो।

नफा-नुकसान का आधार?

पाँच इन्द्रियों के द्वारा जो-जो अनुभव में आता है वह सारा ही 'डिस्चार्ज' है। यह तो पुण्य के आधार पर खुद की धारणा के अनुसार होता है तब अहंकार करता है कि 'मैंने किया' और फिर जब पाप का उदय होता है और नुकसान होता है, तब 'भगवान ने किया' कहते हैं! नहीं तो कहते हैं कि मेरे ग्रह खराब हैं!!! और कमाई, वह तो सहज कमाई है। कोई मनुष्य कमा नहीं सकता है। यदि मेहनत से कमाया जा सकता तो मज़दूर ही कमाते! यह तो आपका पुण्य कमाता

है और खुद अहंकार लेते हो, 'मैंने कमाया, मैंने कमाया।' वह दस लाख कमाए तब तक ऐसे सीना तानकर घूमता फिरता है और पाँच लाख का नुकसान हुआ, तब हम पूछें, 'सेठ क्यों ऐसा?' तब कहेगा, 'भगवान रुठे हैं।' देखो उसे कोई मिला भी नहीं फिर। दूसरा कोई मिलता नहीं। भगवान बेचारे के सिर पर डालता है। आपका मनचाहा (धारणा के अनुसार) ही हो, वह पुण्य का फल है और उससे उल्टा हो, वह सब पाप का फल है। खुद की धारणा चले वैसी है ही नहीं इस जगत् में। अपनी धारणा के अनुसार फल आए तो वह पुण्य का प्रारब्ध है, धारणा के अनुसार नहीं आए तो पाप का प्रारब्ध है।

अहंकार से बंधे पुण्य-पाप

प्रश्नकर्ता : यदि मुझे अहंकार भी नहीं हो और ममता भी नहीं हो, या फिर दोनों में से एक वस्तु नहीं हो तो मैं कौन-सा कर्म करूँ?

दादाश्री : अहंकार है तो पाप-पुण्य होते हैं। अहंकार गया मतलब पाप-पुण्य गए और अहंकार लोग कम करते हैं न, उसका फल भौतिक सुख मिलता है। अहंकार कम किया, उससे कर्म बंधा। उसका फल भौतिक सुख मिलता है। अहंकार अधिक किया उसका कर्म बंधा, उससे भौतिक दुःख आते हैं। अहंकार कम करने से कहीं अहंकार जाता नहीं है, पर वह भौतिक सुख देने वाला है। जहाँ ज्ञानी हो तो ही अहंकार जाता है, नहीं तो अहंकार जाता नहीं है।

कुछ हद तक ही अहंकार कम हो सकता है, उसे संसार में अड़चन नहीं पड़ती। महावीर भगवान की आज्ञा में रहे, तो कुछ हद तक अहंकार ज़रूर कम हो सकता है पर नोर्मल रहता है। नोर्मल अहंकार रहे तब संसार में क्लेश नहीं होता। घर में थोड़ा भी क्लेश या अंतरक्लेश नहीं होता। वैसा अभी भी अपने क्रमिक मार्ग में है। इतना भी वह किसी को ही होगा। थोड़े लोगों को क्लेश नहीं होता, अंतरक्लेश नहीं होता। पर वह अहंकार भी, मोक्ष प्राप्त करने के लिए निकालना पड़ेगा।

और वह अहंकार जाए और 'मैं' जो हूँ वह रियलाइज़ (भान)

हो तो हो चुका, फिर कर्म नहीं बंधेंगे। फिर जज हो तो भी कर्म नहीं बंधेंगे। दानेश्वरी हो तो भी कर्म नहीं बंधेगे। साधु हो तो भी कर्म नहीं बंधेगे और कसाई हो तो भी कर्म नहीं बंधेगे। क्या कहा मैंने? क्यों चौंक गए? कसाई कहा इसलिए? कसाई से पूछो न तो वह कहेगा, साहब मेरे बाप-दादा से चला आया व्यापार है!

प्रश्नकर्ता : अहंकार करता है, तभी पुण्य शब्द का प्रयोग होता है और अहंकार करता है, तभी पाप शब्द का प्रयोग होता है।

दादाश्री : वह ठीक है। अहंकार करता हो तो ही पाप-पुण्य शब्द का प्रयोग होता है। पर अहंकार इसे थोड़ा बदल देता है, दूसरा कुछ लंबा इसमें फर्क नहीं लाता। वह तो हो चुकी है वह चीज़ है। वह इट हेपन्स है और नया वापस हो रहा है। नई फिल्म बन रही है और यह पुरानी फिल्म तो खुल रही है।

जब तक अहंकार है तब तक नया चित्रण किए बिना रहता ही नहीं न! हम चाहे जितना समझाएँ पर नया चित्रण किए बिना रहता ही नहीं न। अहंकार क्या नहीं करता? अहंकार से ही यह सब खड़ा हुआ है। यदि अहंकार विलय हो जाए तो मुक्ति है।

संबंध, पुण्य और आत्मा का...

प्रश्नकर्ता : आत्मा का पुण्य से कोई संबंध है?

दादाश्री : कोई संबंध नहीं है। पर जब तक बिलीफ़ ऐसी है कि 'यह मैं कर रहा हूँ', तब तक संबंध है। जहाँ 'मैं नहीं करता हूँ' वह राइट बिलीफ़ बैठ जाए उसके बाद फिर आत्मा का और पुण्य का कोई संबंध नहीं है। 'मैं दान करता हूँ' 'मैं चोरी करता हूँ' दोनों ही इगोइज़्म है। जहाँ कुछ भी किया जाता है, वहाँ पुण्य बंधता है या पाप बंधता है।

अज्ञानता में बाँधे पुण्य-पाप, कर्म

प्रश्नकर्ता : पाप से अथवा पुण्य से या फिर दोनों का मिश्रण होता है तो कौन-सी योनि में अपना जन्म होता है?

दादाश्री : जन्म और पाप-पुण्य को लेना-देना नहीं है। जन्म होने के बाद पाप-पुण्य उसे फल देते हैं। योनि किस आधार पर मिलती है? कि 'मैं चंदूभाई ही हूँ और यह मैंने किया' ऐसा बोले न, उसके साथ ही योनि में बीज पड़ा।

अब कर्तापन क्यों है? तब कहे, 'करता है कोई और, परशक्ति कार्य कर रही है और खुद ऐसा मानता है कि मैं करता हूँ।' परशक्ति का प्रत्यक्ष प्रमाण क्या है? तब कहे, 'इस जगत् में कोई ऐसा जन्मा नहीं है कि जिसे संडास जाने की स्वतंत्र शक्ति हो। वह तो परशक्ति करवाती है तब होता है।'

अब यह परशक्ति कैसे उत्पन्न हो गई? तब कहते हैं, हर एक जीव अज्ञानता में पुण्य और पाप दो ही कर सकता है, वह जो पाप-पुण्य करता है, उसके फल स्वरूप कर्म के उदय आते हैं। उन उदय से फिर कर्म लिपटते हैं। 'अब पुण्य-पाप बंधने का मूल कारण क्या है? वह नहीं बंधे ऐसा कोई उपाय है क्या?' तब कहते हैं, 'कर्तापन नहीं हो तब पुण्य-पाप नहीं बंधते।' 'कर्तापन किस तरह से नहीं होगा?' तब कहते हैं, ''जब तक अज्ञान है, तब तक 'मैं करता हूँ' वह भान है। अब वास्तव में 'कौन कर रहा है?' वह जाने तो कर्तापन नहीं होगा।'' पुण्य-पाप की जो योजना है, वह यह सब करती है और हम मानते हैं, 'मैंने किया'। फायदा तो हमें वही करवाता है। पुण्य के आधार पर फायदा होता है, तब हम समझते हैं कि 'ओहोहो! मैंने कमाया।' और जब पाप के अधीन होता है, तब नुकसान होता है, तब पता चलता है कि यह तो मेरे अधीन नहीं है। पर वापस दूसरी बार खुद के पुण्य के अधीन हो न तब भूल जाता है। इसलिए फिर से कर्ता बन जाता है।

इन पाँच इन्द्रियों से जो कुछ किया जाता है, पाँच इन्द्रियों से जो कुछ अनुभव में आता है, यह जगत् जो चल रहा है वह सारी ही परसत्ता है, और उसमें ये लोग कहते हैं कि 'यह मैंने किया'। वह कर्म का कर्ता हुआ, वही अधिकरण क्रिया है। इसलिए फिर भोक्ता होना पड़ता है।

अब कर्तापन कैसे मिटे? तब कहते हैं, जब तक आरोपित भाव है तब तक कर्तापन मिटेगा ही नहीं। खुद खुद के मूल स्वरूप में आ जाए तो कर्तापन मिटेगा। वह मूल स्वरूप कैसा है? तब कहे, 'क्रियाकारी नहीं है। वह खुद क्रियाकारी ही नहीं है इसलिए वह कर्ता होगा ही नहीं न!' पर यह तो अज्ञानता से पकड़ बैठा है कि 'यह मैं ही कर रहा हूँ'। ऐसी उसे बेसुधी रहती है और वही आरोपित भाव है।

अंत में तो परे होना है पाप-पुण्य से...

पुण्य, वह क्रिया का फल है, पाप भी क्रिया का फल है और मोक्ष 'अक्रियता' का फल है! जहाँ कोई भी क्रिया है, वहाँ बंध (कर्मबंध) है। वह फिर पुण्य का हो या पाप का, पर बंध है! और 'जाने' वह मुक्ति है। 'विज्ञान' जानने से मुक्ति है। यह सब जो-जो त्यागोगे, उसका फल भोगना पड़ेगा। त्याग करना अपने हाथ की सत्ता है? ग्रहण करना अपनी सत्ता है? वह सत्ता तो पुण्य-पाप के अधीन है।

भीतर प्रेरक कौन है?

भीतर से जो पता चलता है, इन्फोर्मेशन (सूचना) मिलती हैं, वह पुण्य-पाप बताती हैं। भीतर सारा ही ज्ञान-दर्शन है। भीतर से सभी खबर मिलती है। पर वह कब तक मिलती है कि जब तक आप रोको नहीं। उसका उल्लंघन करो तो इन्फोर्मेशन आनी बंद हो जाएगी।

आत्मा परमात्मा स्वरूप है। वह गलत भी नहीं सुझाता और सही भी नहीं सुझाता है। वह तो पाप का उदय आए तब गलत सूझता है और पुण्य का उदय आने पर सही दिखाता है। इसमें आत्मा कुछ भी नहीं करता है। वह तो मात्र स्पंदनों को देखा ही करता है! एकाग्रता तो अंदर से अपने कर्म के उदय साथ दें तब होती है। उदय साथ नहीं दें तो नहीं होता। पुण्य का उदय हो तो एकाग्रता होती है, पाप का उदय हो तो एकाग्रता नहीं होती।

'ज्ञानी' निमित्त, आत्मप्राप्ति के

प्रश्नकर्ता : आत्मा को पहचानने के लिए निमित्त की ज़रूरत है क्या?

दादाश्री : निमित्त के बिना तो कुछ भी नहीं होता।

प्रश्नकर्ता : निमित्त पुण्य से मिलता है या पुरुषार्थ से?

दादाश्री : पुण्य से। बाकी, पुरुषार्थ करे न, इस उपाश्रय से उस उपाश्रय दौड़ता फिरे, ऐसे अनंत जन्मों तक भटकता रहे तो भी निमित्त प्राप्त नहीं होगा और अपना पुण्य हो तो रास्ते में मिल जाएँगे। उसके लिए पुण्यानुबंधी पुण्य चाहिए।

प्रश्नकर्ता : 'ज्ञानी पुरुष' कौन-से पुण्य के आधार पर मिलते हैं?

दादाश्री : पुण्यानुबंधी पुण्य के आधार पर! यह एक ही साधन है कि जिसके कारण मुझसे भेंट होगी। कोटि जन्मों की पुण्य जागे, तब यह ज्ञानी पुरुष का योग प्राप्त होता है।

पुण्य ही, मोक्ष तक साथ में

प्रश्नकर्ता : क्या पुण्य के भाव आत्मा के लिए हितकारी हैं?

दादाश्री : वे आत्मा के लिए इसलिए हितकारी ज़रूर हैं कि वे पुण्य होंगे, तभी वजह से यहाँ सत्संग में 'ज्ञानी पुरुष' के पास आया जा सकेगा न? वर्ना, इन मज़दूरों के पाप हैं, इसलिए उन बेचारों से यहाँ आया किस तरह जाए? पूरे दिन मेहनत करते हैं, तब जाकर शाम को खाने के पैसे मिलते हैं। इस पुण्य के आधार पर तो आपको घर बैठे खाना मिलता है और थोड़ा-बहुत अवकाश मिलता है। इसलिए पुण्य तो आत्मार्थ के लिए हितकारी है। पुण्य होंगे तो फुरसत मिलेगी। हमें ऐसे संयोग मिलेंगे। थोड़ी मेहनत से पैसा मिल जाएगा और पुण्य होंगे तो दूसरे पुण्यशाली लोग मिल जाएँगे, नहीं तो टुच्चे मिलेंगे।

प्रश्नकर्ता : आत्मा के लिए वह अधिक हितकारी है क्या?

दादाश्री : अधिक हितकारी नहीं है, लेकिन उसकी ज़रूरत तो है न? कभी 'एक्सेप्शनल केस' में पाप भी बहुत हितकारी हो जाते हैं। लेकिन पुण्यानुबंधी पाप होना चाहिए। पुण्यानुबंधी पाप होगा न, तो और अधिक हितकारी बन पड़ेगा।

पाप-पुण्य, दोनों भ्रांति?

प्रश्नकर्ता : जो पुण्यशाली हों, उन्हें सभी 'आईए, बैठिए' करेंगे तो, उससे उनका अहम् नहीं बढ़ेगा?

दादाश्री : ऐसा है न कि, यह बात उसके लिए नहीं है जिसे 'ज्ञान' है। यह तो संसारी बात है। जिसके पास 'ज्ञान' है, उसके लिए तो पुण्य भी नहीं रहा और पाप भी नहीं रहा! उसके लिए तो दोनों का निकाल ही करना शेष रहा। क्योंकि पुण्य और पाप दोनों भ्रांति हैं। लेकिन जगत् ने इसे बहुत क़ीमती माना है। यानी कि यह तो जगत् की बात कर रहे हैं। लेकिन इस जगत् में लोग बेकार ही हाथ-पैर मारते हैं।

बहुत पुण्य, बढ़ाए अहंकार...

ऐसा है न, यह कलियुग है, उसमें जो इच्छाएँ हों और उनकी प्राप्ति हो जाए तो उसका अहंकार बढ़ जाता है और फिर गाड़ी उल्टी चलती है। इस कलियुग में हमेशा उसे ठोकर लगे न तो अच्छा है। अर्थात् हर एक युग में यह वाक्य अलग-अलग प्रकार से होता है। इसलिए इस युग का अनुसरण करके इस तरह कह सकते हैं। अभी तो इच्छा के अनुसार मिल जाए तो उसका अहंकार बढ़ जाए, मिलता है सब पुण्य के हिसाब से और बढ़ता क्या है? अहंकार, 'मैं हूँ'। इसलिए ये जितनी इच्छाएँ होती हैं, उनके अनुसार नहीं हो, तब उसका अहंकार ठिकाने रहता है और बात को समझने लगता है। ठोकर लगे तब समझ में आता है, नहीं तो समझ में ही नहीं आता न! इच्छा हो और मिल जाए, उससे तो ये लोग ऊँचे चढ़ गए हैं। इच्छा के अनुसार मिला, इसलिए यह दशा हुई है बेचारों की। जो पुण्य थे वे तो खर्च हो गए और उल्टे फँसाव में आ गए और अहंकार गाढ़ हो गया! अहंकार बढ़ते देर नहीं लगती। फल कौन देता है? पुण्य देता है और मन में क्या समझता है कि 'मैं ही करता हूँ।' इसलिए अहंकारी को तो मार पड़े वही अच्छा। इच्छा हुई और तुरन्त मिल गया कि फिर घर में पैर तो ऊँचा ही रखता है। बाप को भी कुछ नहीं मानता और किसी को भी कुछ नहीं समझता। इसलिए इच्छा हुई और मिले तो समझना कि अधोगति में जाने वाला है, उसका दिमाग़

बढ़ते-बढ़ते चक्रम हो जाता है। थोड़े-बहुतों को अभी इच्छा के अनुसार मिला है, वह तो अभी लाखों के फ्लेट में रहते हैं और उन सभी की जानवर जैसी दशा हो गई है। फ्लेट होगा लाखों का, पर वह उसके लिए हितकारी नहीं है, पर यह तो उन पर दया रखने जैसी स्थिति है।

पुण्य से भी बढ़े संसार...

प्रश्नकर्ता : पुण्य बंधन से तो संसार बढ़ता है, यही भावार्थ हुआ न?

दादाश्री : पुण्य यों तो हितकारी नहीं है, पुण्य वह एक प्रकार से हेल्प करता है। पाप होंगे तो 'ज्ञानी पुरुष' मिलेंगे ही नहीं। 'ज्ञानी पुरुष' से मिलना हो लेकिन पूरे दिन मिल में नौकरी कर रहा हो तो किस तरह मिल पाएगा? यानी इस प्रकार से पुण्य हेल्प करता है। और वह भी पुण्यानुबंधी पुण्य हो वही हेल्प करता है।

प्रश्नकर्ता : जिस प्रकार पाप से संसार बढ़ता है, उसी प्रकार पुण्य से भी संसार बढ़ता है न?

दादाश्री : पुण्य से भी संसार तो बढ़ता है, यहाँ से जो मोक्ष में गए हैं न, वे सब ज़बरदस्त पुण्यशाली थे। देखने जाओ तो उनके आस-पास दौ सौ-पाँच सौ तो रानियाँ होती थीं और बहुत बड़ा राज्य होता था। खुद को पता भी नहीं होता था कि कब सूर्यनारायण उदय हुए और कब अस्त हो गए। पुण्यशाली का जन्म तो ऐसे ठाठ-बाठ में होता है। बहुत सारी रानियाँ होती हैं, ठाठ-बाठ होते हैं फिर भी वे उकता जाते हैं कि इस संसार में क्या सुख है भला? पाँच सौ रानियों में से पचास रानियाँ उन पर खुश रहती थीं, बाकी की मुँह चढ़ाकर घूमती रहती थीं। कुछ तो राजा को मरवाना चाहती थीं। अर्थात् यह जगत् तो अत्यंत कठिनाईयों वाला है। इसमें से पार निकलना बहुत मुश्किल है। 'ज्ञानी पुरुष' मिल जाएँ तो सिर्फ वे ही छुटकारा दिलवा सकते हैं, वर्ना कोई भी छुटकारा नहीं दिलवा सकता। 'ज्ञानी पुरुष' छूट चुके हैं, इसलिए हमें छुटकारा दिलवा सकते हैं। वे तरणतारणहार बन चुके हैं, इसलिए वे छुटकारा दिलवा सकते हैं।

हत् पुण्यशाली, नहीं पाते ज्ञानी को

प्रश्नकर्ता : हम बहुत लोगों को समझाते हैं कि 'दादा' के पास आओ, पर वे नहीं आते हैं।

दादाश्री : पर आना आसान नहीं है। वह तो बहुत पुण्य चाहिए। ज़बरदस्त पुण्य हों तब मिल पाता है। पुण्य के बिना मिले कहाँ से? आपने कितने पुण्य किए थे, तब मुझे मिले हो। अर्थात् पुण्य कच्चा पड़ जाता है कि जिस कारण से वे अभी तक मिल नहीं सकते हैं।

प्रश्नकर्ता : लोगों के पुण्य कब जागेंगे? निमित्त तो उत्कृष्ट हैं।

दादाश्री : हाँ, पर पुण्य जागना इतनी आसान बात नहीं है न। पुण्यशाली होंगे, उनका पुण्य जागे बगैर रहने वाला नहीं है। अभी भी जो पुण्यशाली होंगे, उनका जगेगा ही।

अक्रम मार्ग की लॉटरी के विजेता...

जब इन पुण्यानुबंधी पुण्यशालियों के लिए ऐसा मार्ग निकलता है न! प्रत्यक्ष के बिना कुछ भी नहीं हो पाता। 'वीतराग विज्ञान' प्रत्यक्ष केबिना काम में आए वैसा नहीं है और यह तो 'अक्रम विज्ञान' उसमें तो केश डिपार्टमेन्ट (रोकड़ खाता), केश बैंक (रोकड़ बैंक) और क्रमिक में तो त्याग करते हैं, परंतु केश फल नहीं आता और यह तो केश फल!

ऐसा ज्ञान यह साढ़े तीन अरब की जनसंख्या में किसे नहीं चाहिए? सभी को चाहिए। पर यह ज्ञान सभी के लिए नहीं है। यह तो महापुण्यशालियों के लिए है। यह 'अक्रम ज्ञान' प्रकट हुआ है, उसमें लोगों के कुछ पुण्य होंगे न! सिर्फ एक भगवान के ऊपर आसरा रखने वाले घूमते, भटकने वाले, भक्तों के लिए और जिनके पुण्य होंगे न उनके लिए 'यह' मार्ग निकला है। यह तो बहुत पुण्यशालियों के लिए है और यहाँ सहज ही आ जाएँ और सच्ची भावना से माँगे उन्हें दे देते हैं। पर लोगों को इसके लिए कुछ कहने जाना नहीं होता है। इन 'दादा' की और उनके महात्माओं की हवा से ही जगत् का कल्याण हो जाएगा।

मैं निमित्त हूँ, कर्ता नहीं। यहाँ जिसे भावना हुई और 'दादा' के दर्शन किए तो वे दर्शन ठेठ तक पहुँचते हैं। 'दादा' वे इस देह के निकट के पड़ोसी की तरह रहते हैं और ये बोल रहे हैं वह रिकॉर्ड है। यह 'अक्रम ज्ञान' तो कुछ ही बहुत पुण्यशाली होंगे, उनके लिए है, यहाँ तो जो 'सहज' ही आ जाए और उसका पुण्य का पासपोर्ट ले आए, उसे हम ज्ञान दे देते हैं। 'दादा' की कृपा प्राप्त कर गया, उसका काम हो गया!

यहाँ आए हुए लोग सब पुण्य कितने अच्छे लेकर आए हैं! 'दादा' की लिफ्ट में बैठकर मोक्ष में जाना है। कोटि जन्मों की पुण्य जमा हो, तब तो 'दादा' मिलते हैं! और फिर चाहे कैसा भी डिप्रेशन (हताशा) होगा वह चला जाएगा। हर प्रकार से फँसे हुओं के लिए 'यह' स्थान है। अपने यहाँ तो क्रोनिक (पुराने) रोग मिट गए हैं।

विश्व में अरबोंपति कितने?

एक महाराज कहीं आए थे, वहाँ लाखों लोग इकट्ठे हुए थे। जबकि अपने यहाँ तो दो सौ–तीन सौ लोग इकट्ठे हुए। संभव हो तब तक अंतिम स्टेशन का टिकट कौन लेगा? वैसे लोग कम होते हैं और बीच के स्टेशन का टिकट तो सभी लेते हैं। इसलिए एक व्यक्ति मुझे कहता है कि, 'ऐसा क्यों?' तब मैंने कहा, 'पूरी दुनिया में अरबपतियों के नाम गिनने जाएँ तो कितने होंगे?' तब कहा, 'वे तो बहुत थोड़े होंगे।' मैंने कहा, 'और सामान्य लोग?' तब बोले, 'वे तो बहुत सारे होंगे।' तब ये जो धर्म में महापुण्यशाली होंगे, वे हमें मिलेंगे, और पैसे के पुण्यशाली होंगे वे तो अरबपति होंगे और अरबपति से भी अधिक ऊँचा पुण्य है यह तो! वैसे तो बहुत कम होते हैं।

पुण्यानुबंधी पुण्य 'ज्ञानी पुरुष' से भेंट करवा देता है! अब वह पुण्यानुबंधी पुण्य किसे कहा जाता है? कि जिन्हें 'दादा भगवान' मिल जाएँ। करोड़ों जन्मों तक नहीं मिलें वैसे 'दादा', वे बस एक घंटे में हमें मोक्ष दे देते हैं। मोक्ष का सुख चखाते हैं, अनुभूति करवा देते हैं, कभी ही वे दादा भगवान मिलते हैं, मुझे भी मिल गए और आपको भी मिल गए, देखो न!

प्रश्नकर्ता : हम कहाँ कुछ कमाकर लाए हैं? यह तो आपकी कृपा है।

दादाश्री : पुण्य अर्थात् क्या कि आप मुझे मिल गए, वह आपके पास कोई हिसाब था उस आधार पर! नहीं तो मुझे मिलना, वह बहुत मुश्किल है। इसलिए मिलना वह आपका पुण्य है एक प्रकार का, और मिलने के बाद आएँ, टिके रहें, तो बहुत ऊँची बात है।

पुण्य के साथ चाहिए कषाय मंदता

प्रश्नकर्ता : समकित के लिए प्रयत्न ज़रूरी नहीं हैं?

दादाश्री : नहीं, प्रयत्न तो अपने आप, सहज प्रयत्न होना चाहिए। यह तो खेत जोतते हैं ये लोग! अर्थात् आने वाले भव में फल लेने के लिए। समकित में फल रहित वाला होना चाहिए। यह तो जप-तप आदि जो-जो करते हैं न, उसका पुण्य बंधता है और उसका फल मिलता है।

प्रश्नकर्ता : उसका जो भी फल मिले तो वह समकित के रूप में ही मिलना चाहिए न?

दादाश्री : नहीं, नहीं। समकित और इसका लेना-देना नहीं है। वे सारे फल भौतिक मिलते हैं। देवगति मिलती है, समकित तो अलग ही चीज़ है।

वे तीन नियम पुण्यानुबंधी पुण्य के

समकित प्राप्ति के लिए पुण्यानुबंधी पुण्य चाहिए। मोह है वह टूटना चाहिए, क्रोध-मान-माया-लोभ घटने चाहिए। तो वह समकित की ओर जाएगा। नहीं तो फिर समकित होगा ही किस तरह? इन लोगों की तो क्रोध-मान-माया-लोभ बढ़ें वैसी क्रियाएँ हैं सारी।

प्रश्नकर्ता : क्रोध-मान-माया-लोभ कैसे कम होते हैं और पुण्यानुबंधी पुण्य कैसे बंधते हैं?

दादाश्री : हमें सिर्फ मोक्ष जाने की इच्छा होनी चाहिए और उस इच्छार्थ जो-जो किया जाए, वह क्रिया पुण्यानुबंधी पुण्य बाँधती है, क्योंकि हेतु मोक्ष का है इसलिए।

फिर अपने पास जो आया हो वह औरों के लिए लुटा दें! उसे जीवन जीना आया कहा जाता है। पागलपन से नहीं, समझदारी से लुटा दें। पागलपन से शराब-वराब पीता हो, उसमें कुछ भला नहीं होता। कभी भी व्यसन नहीं करे और औरों के लिए लुटाए, वह पुण्यानुबंधी पुण्य कहलाता है।

उससे आगे पुण्यानुबंधी पुण्य कौन-सा? किसी भी क्रिया में बदले की आशा नहीं रखे, सामने वाले को सुख देते समय किसी भी प्रकार के बदले की इच्छा नहीं रखे, वह पुण्यानुबंधी पुण्य!

ज्ञान ही छुड़वाए भटकन में से

लोगों ने जिसे जाना है, वह तो लौकिक ज्ञान है। सच्चा ज्ञान तो वास्तविक होता है और जब वास्तविक ज्ञान हो तब किसी प्रकार का *अजंपा* नहीं होने देता। वह भीतर किसी प्रकार की पज़ल खड़ी नहीं होने देता। इस भ्रांतिज्ञान से तो निरी पज़ल ही खड़ी होती रहती हैं। और वे पज़ल फिर सोल्व नहीं हो पाती! बात सही है, लेकिन वह समझ में आनी चाहिए न? अच्छी तरह समझे बिना कभी भी हल नहीं आएगा। समझ में दृढ़ करना पड़ेगा। इसके लिए पाप धोने पड़ेंगे। जब तक पाप नहीं धुलेंगे, तब तक ठिकाने पर नहीं आएगा। ये पाप ही सब उलझा देते हैं। पापरूपी और पुण्यरूपी पच्चर (रुकावट) हैं बीच में, वे ही मनुष्य को उलझाती हैं न!

अनंत जन्मों से भटकते-भटकते इस भौतिक के ही पीछे पड़े हैं। इस भौतिक से अंतर शांति नहीं मिलती। रुपयों का बिस्तर बिछा लेने से क्या नींद आएगी? यह तो खुद की सभी अनंत शक्तियाँ व्यर्थ हो गईं!

ज्ञानी पुरुष पाप धो देते हैं। कृष्ण भगवान ने गीता में कहा है,

ज्ञानी पुरुष पाप की पोटली बनाकर नष्ट कर देते हैं। उस पाप का नाश हो जाए तब आत्मा प्रकट होता है, नहीं तो किसी भी तरह से आत्मा प्रकट नहीं होता है। खुद किस तरह पाप का नाश कर सकेगा? नया पुण्य ज़रूर बाँध सकता है, परंतु पुराने पापों का नाश नहीं कर सकता। ज्ञानी पुरुष का ज्ञान ही पापों का नाश कर देता है।

बाकी, पुण्य और पाप, पाप और पुण्य, उनके अनुबंध में ही मनुष्य मात्र भटकता रहता है। उसे कभी भी उसमें से मुक्ति नहीं मिलती है। बहुत पुण्य करे तो बहुत हुआ तो देवगति मिलती है, पर मोक्ष तो नहीं ही मिलता। मोक्ष तो ज्ञानी पुरुष मिलें, और आपके अनंतकाल के पापों को भस्मिभूत करके आपके हाथ में शुद्ध आत्मा दें तब होगा। तब तक चोर्यासी लाख योनियों में भटकते ही रहना है।

'हम' ज्ञान देते हैं, तब चित्त शुद्ध कर देते हैं। पाप का नाश करते हैं और दिव्यचक्षु दे देते हैं, सभी प्रकार से उसके आत्मा और अनात्मा को अलग कर देते हैं!

वीज़ा, महाविदेह क्षेत्र का

प्रश्नकर्ता : महाविदेह क्षेत्र में किस तरह जाया जा सकता है? पुण्य से?

दादाश्री : यह ज्ञान मिलने के बाद हमारी पाँच आज्ञा पालें, तो उससे इस भव में पुण्य बंध ही रहे हैं, वे महाविदेह क्षेत्र में ले जाते हैं। आज्ञा पालने से धर्मध्यान होता है। वह सारा फल देगा। हमें मोक्ष में जाना है, वहाँ पर मोक्ष में जा सके, उतना पुण्य चाहिए। यहाँ आप सीमंधर स्वामी का जितना करोगे (भक्ति-आराधना), उतना सब आपका आ गया।

आपने सीमंधर स्वामी का नाम तो सुना है न? वे अभी तीर्थंकर हैं, महाविदेह क्षेत्र में आज उनकी उपस्थिति है।

सीमंधर स्वामी की आयु कितनी, 60-70 साल की होगी? पौने

दो लाख वर्ष की आयु है! अभी सवा लाख वर्ष जीने वाले हैं! यह उनके साथ तार जोड़ देता हूँ। क्योंकि वहाँ जाना है। यहाँ से ही सीधा मोक्ष होने वाला नहीं है। अभी एक जन्म बाकी रहेगा। उनके पास बैठना है इसलिए तार जोड़ देता हूँ।

और ये भगवान पूरे वर्ल्ड का कल्याण करेंगे। पूरे वर्ल्ड का कल्याण होगा उनके निमित्त से। क्योंकि वे जीवित हैं। जो मोक्ष में जा चुके हों, उनसे कुछ हो नहीं सकता, उनकी भक्ति से केवल पुण्य बंधता है, जो संसार फल देता है!

वहाँ पुण्य और पाप दोनों निकाली...

धर्म दो प्रकार के हैं। एक स्वाभाविक धर्म, उसे रियल धर्म कहते हैं। और दूसरा विभाविक धर्म, जो रिलेटिव धर्म कहलाता है। जब 'शुद्धात्मा' प्राप्त हो जाए, तब स्वाभाविक धर्म में आते हैं। स्वाभाविक धर्म ही खरा धर्म है, उस धर्म में अच्छा-बुरा कुछ भी चुनने का है ही नहीं। विभाविक धर्म में सबकुछ चुनने का है।

दान करना, लोगों पर उपकार करना, ओब्लाइजिंग नेचर रखना, लोगों की सेवा करना, उन सभी को रिलटिव धर्म कहा है। उससे पुण्य बंधता है। और गालियाँ देने से, मारामारी करने से, लूट लेने से पाप बंधते हैं। पुण्य और पाप जहाँ हैं, वहाँ रियल धर्म ही नहीं है। रियल धर्म पुण्य-पाप से रहित है। जहाँ पुण्य-पाप को हेय (त्याज्य) माना जाता है और खुद का आत्मा स्वरूप उपादेय (ग्रहणीय) माना जाता है, वहाँ 'रियल धर्म' है। इस प्रकार यह 'रियल' और 'रिलेटिव' दोनों अलग धर्म हैं।

जब तक 'मैं कौन हूँ' जानेगा नहीं, तब तक पुण्य उपादेय रूप में ही होता है और पाप हेय रूप में होता है। पुण्य-पाप हेय हो गए, वहाँ पर समकित! भगवान ने कहा है कि पाप-पुण्य दोनों के ऊपर जिसे द्वेष या राग नहीं है वह 'वीतराग' है!

- **जय सच्चिदानंद**

मूल गुजराती शब्दों के समानार्थी शब्द

नियाणां : अपना सारा पुण्य लगाकर किसी एक वस्तु की कामना करना

कढ़ापा : कुढ़न, क्लेश

अजंपा : बेचैनी, अशांति, घबराहट

उपाधि : बाह्य दुःख, बाहर से आ पड़ने वाले दुःख

अणहक्क : बिना हक़ का

भोगवटा : सुख या दुःख का असर, भुगतना

संपर्क सूत्र

दादा भगवान परिवार

अडालज : **त्रिमंदिर**, सीमंधर सिटी, अहमदाबाद-कलोल हाईवे,
(मुख्य केन्द्र) पोस्ट : अडालज, जि.-गांधीनगर, गुजरात - 382421
फोन : +91 79 3500 2100, +91 9328661166/77
E-mail : info@dadabhagwan.org

मुंबई : **त्रिमंदिर,** ऋषिवन, काजुपाडा, बोरिवली (E)
फोन : 9323528901

दिल्ली	: 9810098564	**बेंगलूर**	: 9590979099
कोलकता	: 9830093230	**हैदराबाद**	: 9885058771
चेन्नई	: 7200740000	**पूणे**	: 7218473468
जयपुर	: 8890357990	**जलंधर**	: 9814063043
भोपाल	: 6354602399	**चंडीगढ़**	: 9780732237
इन्दौर	: 6354602400	**कानपुर**	: 9452525981
रायपुर	: 9329644433	**सांगली**	: 9423870798
पटना	: 7352723132	**भुवनेश्वर**	: 8763073111
अमरावती	: 9422915064	**वाराणसी**	: 9795228541

U.S.A. : **DBVI Tel. :** +1 877-505-DADA (3232),
Email : info@us.dadabhagwan.org

U.K. : +44 330-111-DADA (3232)

Kenya : +254 795-92-DADA (3232)

UAE : +971 557316937

Dubai : +971 501364530

Australia : +61 402179706

New Zealand : +64 21 0376434

Singapore : +65 91457800

www.dadabhagwan.org



मोक्ष हेतु, पुण्यानुबंधी पुण्य

समकित प्राप्ति के लिए पुण्यानुबंधी पुण्य की आवश्यकता है। क्रोध-मान-माया-लोभ कम हो जाने चाहिए। तब वह समकित की ओर जाएगा हमारी इच्छा केवल मोक्ष में जाने की ही होनी चाहिए और उस इच्छा के लिए जो-जो किया जाता है, वह क्रिया पुण्य बाँधती है। क्योंकि हेतु मोक्ष का है न, इसलिए।

फिर खुद के पास जो कुछ भी हो उसे लुटा दे! परायों के लिए लुटा दे, वह पुण्यानुबंधी पुण्य कहलाता है। किसी भी क्रिया में बदले की इच्छा नहीं रखे, सामनेवाले को सुख देते समय किसी भी प्रकार से बदले की इच्छा नहीं रखे, वह पुण्यानुबंधी पुण्य कहलाता है।

\- दादाश्री

dadabhagwan.org

ISBN 978-93-86289-63-6

Printed in India

Price ₹35